पर्यावरण प्रबन्धन में
पर्यटन का योगदान

स्वच्छ पर्यावरण के लिए प्रतिबद्ध
IN PURSUIT OF CLEAN ENVIRONMENT
cpcb

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय

पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन का योगदान

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय
परिवेश भवन, इस्ट अर्जुन नगर, दिल्ली–110032

विषयवस्तु

क्रम सं0	विषय	पृष्ठ सं.
1.	प्रस्तावना	1
2.	पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन का योगदान	4
3.	वन्य जीव पर्यटन एवं हमारा पर्यावरण	9
4.	पर्वतीय पारिस्थितिकी पर पर्यटन का प्रभाव	27
5.	पर्यटन का जलाशयों एवं अनूप स्थलों पर प्रभाव	41
6.	भूमि स्वरूप संरक्षण में पर्यटन का योगदान	51
7.	ऐतिहासिक पारिस्थितिक संरक्षण में पर्यटन का योगदान	58
8.	पर्यटन एवं सांस्कृतिक पारिस्थितिक तन्त्र	63
9.	पर्याहितैषी नव पर्यटन	71

अजय त्यागी, भा.प्र.से.
अध्यक्ष
AJAY TYAGI, IAS
Chairman

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड
(भारत सरकार का संगठन)
पर्यावरण एवं वन मंत्रालय
Central Pollution Control Board
(A Govt. of India Organisation)
Ministry of Environment & Forests
Phone : 22304948 / 22307233

प्राक्कथन

जन-सामान्य में पर्यावरण प्रदूषण एवं प्रबंधन के प्रति जागरूकता उत्पन्न करने की दृष्टि से केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड प्रति वर्ष 'प्रदूषण नियंत्रण और पर्यावरण योजना एवं विषयों' पर हिन्दी में मौलिक पुस्तक लेखन हेतु पुरस्कार योजना आयोजित करता है। इस परिप्रेक्ष्य में वर्ष 2012 की योजना के अंतर्गत श्री प्रशान्त कुमार मिश्र, वनस्पति विज्ञान विभाग विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग (झारखण्ड) की प्रविष्टि "पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन का योगदान" को प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया है। श्री प्रशान्त कुमार मिश्र की पुस्तक में न सिर्फ पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन के योगदान के संबंध में चर्चा की गई है बल्कि वन्य जीव पर्यटन की समस्याओं और संभावनाओं तथा देश भर में फैले अनेक पर्यटन स्थलों के बारे में भी विस्तृत जानकारी दी गई है। पुस्तक लेखन के लिए किया गया प्रयास सराहनीय है। मैं इस पुस्तक के लेखक श्री प्रशान्त कुमार मिश्र के उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

आशा है कि 'पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन का योगदान' नामक यह पुस्तक भारत में वन्य जीव पर्यटन, विभिन्न पर्यटन स्थलों, पर्यटन उद्योग से जुड़ी समस्याओं व संभावनाओं के संबंध में जन सामान्य को जानकारी उपलब्ध करवाने की दिशा में सफल सिद्ध होगी।

अजय त्यागी

दिनांक:

'Parivesh Bhawan', C.B.D.-cum-Office Complex, East Arjun Nagar, Delhi-110 032
Fax : 22304948 / 22307078 e-mail : ccb.cpcb@nic.in
Website : www.cpcb.nic.in

प्रस्तावना

मनुष्य इस पृथ्वी पर बीस लाख से भी कम समय से रह रहा है तथा इस प्रकार से विभिन्न जीव–जन्तुओं में मनुष्य सर्वाधिक नया है। परन्तु विडम्बना यह कि प्रकृति एवं पर्यावरण से छेड़–छाड़ करने में मनुष्य का कोई जवाब नहीं है। अपने जीवन को सुविधाजनक बनाने के लिए मनुष्य न पर्यावरण के भौतिक और रासायनिक स्वरूप में काफी फेर बदल कर चुका है। इन परिवर्तनों के परिणाम स्वरूप विभिन्न जीव–जन्तुओं के उपलब्धता तथा उनके जनसंख्या पर भी काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। भूगर्भीय जल स्तर का तेजी से गिरते जाना, जलाशयों का सूखना, उपलब्ध पानी का दूषित होना, वायु का प्रदूषित होना, भूमि स्वरूप का बदलते जाना, मृदा क्षरण होना, जैव विविधता का ह्रास होना एवं जलवायु में परिवर्तन होना कुछ ऐसी घटनाएँ हैं जिनसे हमारी पीढ़ी दो–चार हो रही है और अगली पीढ़ी के लिए समस्या और विकट होने की सम्भावना है।

इस निरन्तर बिगड़ते पर्यावरण संतुलन के लिए किसी एक क्षेत्र अथवा व्यवसाय को जिम्मेवार नहीं ठहराया जा सकता है। उद्योग और कल–कारखाने, खनन, आधुनिक कृषि, जिनसे पर्यावरण संतुलन बिगड़ा है। अर्थशास्त्रियों का मानना है कि औद्योगीकरण के साथ–साथ पर्यावरण संतुलन बिगड़ा और जैसे–जैसे अर्थव्यवस्था "सेवा क्षेत्र" पर निर्भर होता जाएगा, स्थिति में सुधार आता जाएगा। इस स्थिति की विवेचना करने के लिए पर्यटन एवं उसके पर्यावरणीय प्रभाव पर विस्तृत अध्ययन किया गया।

पर्यटन आज उद्योग का स्वरूप ले चुका है तथा इस "अदृश्य निर्यात" का कारक बन गया है तथा किसी भी क्षेत्र के सामाजिक–आर्थिक विकास में इसके योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है।

विदेशी मुद्रा के भंडार को बढ़ाने तथा रोजगार बढ़ाने में पर्यटन ने काफी योगदान दिया है। परन्तु किसी भी अन्य उद्योग की तरह पर्यटन का प्रभाव स्थानीय पर्यावरण पर भी पड़ता है। व्यापक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह प्रभाव नकारात्मक एवं सकारात्मक दोनों प्रकार का होता है। शिमला, दार्जिलिंग, नैनीताल एवं मसूरी में वहाँ की स्थाई आबादी के अतिरिक्त गर्मियों में करीब 2.75 लाख लोगों का अतिरिक्त बोझ पड़ जाता है। इसके परिणाम स्वरूप आज इन पर्वतीय क्षेत्रों में बिजली तथा पेयजल की गम्भीर संकट उत्पन्न हो गई है। कभी–कभी इस गम्भीर स्थिति के परिणामस्वरूप स्थानीय नागरिक और पर्यटकों के बीच संघर्ष की स्थिति भी उठ खड़ी होती है। कभी अपनी नैसर्गिक सौंदर्य एवं शांति के लिए जाना जाने वाला शिमला का "मॉल रोड" आज

"चाँदनी चौक" बन गया है। किसी भी क्षेत्र की अपनी अलग "धारक क्षमता" होती है तथा उसका अत्याधिक उलंघन हानिकारक होता है। इसके अतिरिक्त पर्यटन विकास के लिए मूल–भूत सुविधाएँ जुटाने के लिए सड़क, होटलों, दुकानों एवं अन्य व्यापारिक संस्थानों का फैलना अवश्यम्भावी है। निश्चित तौर पर इन सबका दुष्परिणाम स्थान विशेष के पारिस्थितिकी पर पड़ता है। पर्यटकों का व्यवहार भी अक्सर पर्यटन स्थल के पर्यावरण के प्रति जिम्मेवारीपूर्ण नहीं होता है। लोग छोटी अवधि के लिए किसी स्थान पर जाते हैं और उस स्थल के प्रति उनका लगाव नहीं होता है। फलतः पर्यटक उस स्थान के पर्यावरण को जाने–अनजाने क्षति पहुँचा देते हैं। इन सभी कारणों से अक्सर पर्यटन विकास पर्यावरण के लिए हानिकारक सिद्ध होता है।

परन्तु लोगों की बढ़ती जागरूकता और समाज के जिम्मेवार लोगों के प्रयास से आज कुछ ऐसे भी उदाहरण हमारे समक्ष हैं जिनमें पर्यटन विकास ने पर्यावरण प्रबन्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। अभयारण्य एवं राष्ट्रीय उद्यान आज न सिर्फ जैसे विविधता संरक्षण के लिए उपयोगी स्थल के रूप में जाने जाते हैं बल्कि इनकी मान्यता पर्याहितैषी पर्यटन स्थल के रूप में भी होता है। निश्चित तौर पर इन पर्यटन स्थलों के उचित प्रबन्धन से वहाँ के पर्यावरण पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है। पर्यटन से होने वाले मौद्रिक लाभ का कुछ प्रतिशत भी यदि पर्यावरण प्रबन्धन में लगा दिया जाए तो यह एक बड़ी उपलब्धि होगी।

पारिस्थितिक संरक्षण एवं प्रबन्धन के बारे में आज विद्वानों का विचार आज काफी व्यापक हो गया है। आज सांस्कृतिक महत्व के स्थानों, धरोहरों, आयोजनों एवं रीति–रिवाजों की उपयोगिता का समझा जाने लगा है। ऐतिहासिक धरोहरों के प्रति स्थानीय लोगों का काफी लगाव होता है। अतः इन धरोहरों के संरक्षण में स्थानीय निवासियों का योगदान आसानी से पाया जा सकता है। इन धरोहरों को सुरक्षित एंव संरक्षित करके न केवल पर्यटकों को लुभाया जा सकता है अपितु वहाँ के पर्यावरणीय घटकों के संरक्षण में काफी हद तक सफलता प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार होने वाली आय से लोगों के सामाजिक आर्थिक स्थिति में भी सुधार होता है। यह सर्वविदित है कि गरीबी एवं प्रदूषण से सीधा सम्बन्ध होता है। इसी प्रकार स्थानीय आयोजनों एवं रीति–रिवाजों का भी उपयोग पर्यावरण प्रबन्धन के लिए किया जा सकता है। रीति–रिवाज एवं स्थानीय आयोजन हमेशा उस स्थान विशेष के पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी के अनुरूप होता है। अतः इनके नियमित आयोजन का पर्यावरण प्रबन्धन में धनात्मक प्रभाव पड़ता है। इसका एक अति रोचक उदाहरण हमें झारखण्ड के कुछ क्षेत्रों से प्राप्त होता है।

झारखण्ड के हजारीबाग जिले से करीब 25 कि०मी० की दूरी पर दुधमटिया नाम का एक गाँव है। दिनांक 7 अक्टूबर 1995 को यहाँ के ग्रामीणों एकत्र होकर वन संरक्षण का निश्चय किया। इसके लिए उन लोगों ने वृक्षों का रक्षा बन्धन करने का निर्णय लिया। 10–15 से०मी० चौड़ाई वाले लाल रंग के सूती कपड़े से रक्षा बन्धन किया गया। आज ग्रामीण रक्षा बन्धन किए हुए वृक्षों को कभी कोई क्षति नहीं पहुँचाते हैं। रक्षा बन्धन किए वन स्वतः गिरे पत्तियों एवं टहनियों को ही लोग चुनते हैं। अब प्रति वर्ष सात अक्टूबर को वृक्षों का रक्षा बन्धन किया जाता है। इस प्रयास के परिणामस्वरूप वनों की स्थिति में काफी सुधार आया है। इस परिपाटी को झारखण्ड के दूसरे क्षेत्रों में भी अपनाया जा रहा है। इस प्रकार के रीति–रिवाज को यदि पर्यटन उत्पाद के रूप में बढ़ावा मिले तो पर्यावरण संरक्षण में काफी सहायता प्राप्त हो सकती है।

ऊपर वर्णित परिस्थिति से यह स्पष्ट हो जाता है कि आज पर्यटन एवं पर्यावरण को समेकित रूप से देखा जाना चाहिए तथा पर्यटन के प्रतिकूल एंव अनुकूल प्रभाव को ध्यान में रखते हुए पर्यावरण प्रबन्धन का प्रयास किया जाना चाहिए।

पर्यावरण प्रबन्धन में पर्यटन का योगदान

पर्यटन का पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव की कल्पना मात्र से ही सिर्फ नकारात्मक विचार हम सभी के मन में आने लगता है। अधिकांश अवसरों पर हमें जो अनुभव प्राप्त हुआ है तथा विभिन्न क्षेत्र के विद्वानों के द्वारा किए गए अनुभव से इस विचारधारा की कुछ हद तक पुष्टि भी होती है। परन्तु पर्यटन उद्योग को सिर्फ खलनायक के रूप में ही देखना सर्वथा अनुचित होगा। ऐसे कई दृष्टान्त हमारे सामने हैं (यद्यपि इनकी संख्या कम है) जिसमें पर्यटन उद्योग के सहयोग से पर्यावरण के विभिन्न आयामों के प्रबन्धन तथा उचित देख–रेख में काफी सहयोग प्राप्त हुआ है तथा पर्यटन एवं पर्यावरण के आपसी तालमेल का सुखद परिणाम भी सामने आया है। पर्यावरण प्रबन्धन में ऐसे सारे क्रिया–कलाप आ जाते हैं जिसमें प्राकृतिक संसाधनों के दुरूपयोग को कम करना तथा प्रदूषण पर नियन्त्रण पाना आता है। पर्यावरण प्रबन्धन तथा पर्यटन विकास, दोनो ही ऐसे कार्य हैं जिनमें स्थानीय लोगों की भागीदारी के बिना सफलता की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। अतः पर्यटन के उचित विकास से एक प्रकार की अनुकूल स्थिति पैदा होती है। जिसमें पर्यावरण संरक्षण को भी परोक्ष रूप से सम्बल मिलता है। स्थानीय भागीदार से लोगों में पर्यावरण के प्रति चेतना जागृत होती है। स्थानीय समुदाय यह समझने लगता है कि प्रकृति तथा पर्यावरण को सुरक्षित रखे बिना उनके क्षेत्र के प्रति पर्यटकों को आकर्षित नहीं किया जा सकता है। ऐसी स्थिति में अन्ततः हानि उन्हें ही उठाना पड़ेगा। अतः निहित स्वार्थ से ही सही, उनका पर्यावरण के प्रति चेतना जागती है और इसका निश्चित लाभ स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण के रूप में प्राप्त होता है।

पर्यटन उद्योग का दूसरा महत्वपूर्ण योगदान विभिन्न नियमों एवं परिनियमों के पालन में अधिक कुशलता लाना है। पर्यटन उद्योग विभिन्न नियमों तथा दिशा–निर्देशों के अन्तर्गत कार्य करता है। सरकार के द्वारा बनाए गए कानून अलग–अलग क्षेत्रों पर लागू होता है तथा एक पर्यावरण प्रबन्धक को इसका उचित पालन करना अनिवार्य होता है। पर्यटन सम्बन्धी कानूनों एवं दिशा–निर्देशों का सिंहावलोकन किया जाए तो इनमें से अधिकांश पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए ही बनाए गए हैं। पर्यटन उद्योग का मूल आधार ही स्वच्छ एवं प्रदूषण रहित पर्यावरण तथा प्राकृतिक सौंदर्य होता है। अतः इस उद्योग को अपने अस्तित्व के लिए पर्यावरण सुरक्षित रखने से सम्बन्धित कानूनों का पालन करना आवश्यक हो जाता है। वैसे तो पर्यावरण प्रबन्धन तथा प्रदूषण नियन्त्रण के लिए अपना कानून तथा दिशा–निर्देश होता है परन्तु इनका पालन उचित प्रकार से नहीं हो पाता है। इसका सर्वाधिक प्रमुख कारण यह है कि अक्सर पर्यावरण सम्बन्धी कानूनों का उल्लंघन अपेक्षाकृत दूर–दराज के स्थानों पर होता है जहाँ लोगों का ध्यान कम ही जाता है।

उदाहरण के लिए वृक्षों की अवैध कटाई सुदूर घने जंगल में किया जाता है। विभिन्न उद्योग अपना प्रदूषक तत्व भी दूर एवं सुनसान क्षेत्र में छोड़ते हैं। स्वाभाविक है इन स्थानों पर सार्वजनिक विरोध थोड़ा मुश्किल है। अतः अपराधी के बच निकलने की सम्भावना अधिक हो जाती है। परन्तु जिस स्थान पर पर्यटन विकास करता है वहाँ लोगों का ध्यान आसानी से जाता है। स्थानीय लोग तथा सैलानी दोनो ही पर्यावरण क्षति को अतिशीघ्र चिह्नित तथा लक्षित कर लेते हैं। अतः अक्सर लोग ऐसे स्थानों पर अवैध कार्यवाई करने से बचते हैं तथा यहाँ सरकारी कानूनों का अधिक सफलता एवं कड़ाई से पालन होता है। इस सम्बन्ध में बरमूडा टापू का उदाहरण प्रासंगिक होगा। बरमूडा टापू अन्तराष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर एक जाना–माना स्थल है। यहाँ के आर्थिक विकास में सर्वाधिक योगदान पर्यटन का ही है क्योंकि 69 प्रतिशत राष्ट्रीय आय इस उद्योग के कारण ही होता है। अतः सरकार तथा आम जनता दोनो ही यहाँ के पर्यावरण के प्रति हमेशा सचेष्ट रहते हैं। यहाँ गाड़ियों की संख्या सीमित रखी जाती है तथा गाड़ियों की गतिसीमा का भी कड़ाई से पालन किया जाता है। इस प्रकार वाहन प्रदूषण पर काफी हद तक अंकुश लगाया गया है। औद्योगिक विकास पर भी पर्याप्त प्रतिबन्ध है जिसके परिणाम स्वरूप प्रदूषण तथा प्राकृतिक संसाधनों का भी उचित प्रबन्धन हो सका है। यहाँ बाहर से आकर बसने पर भी रोक लगी हुई है, जिसके कारण आबादी एक सीमा से अधिक नहीं बढ़ने दी जाती है। इसके अतिरिक्त पेड़–पौधों तथा जन्तुओं के प्राकृतिक आवास को नुकसान पहुँचाने वाले को तुरन्त दंडित करने का भी प्रावधान है। इन कदमों का स्पष्ट प्रभाव बरमूडा के पर्यावरण पर पड़ा है जो आज भी पर्यटकों को आकर्षित करने में सक्षम है। दूसरी ओर बरमूडा के निकट के अन्य टापू आज दयनीय अवस्था में है। चूँकि वहाँ पर्यटन का उचित विकास नहीं हुआ है अतः वहाँ की प्राकृतिक सम्पदा के प्रति लोग उतने संवेदनशील नहीं है। भूटान का भी उदाहरण काफी प्रेरणादायक है। प्राकृतिक छटा और मनोरम दृश्यों से परिपूर्ण इस पहाड़ी देश के प्रति पर्यटकों का आकर्षण काफी बढ़ रहा है। परन्तु भूटान सरकार प्रतिवर्ष 2,000 से अधिक सैलानियों को भूटान में प्रवेश करने की अनुमति नहीं देता है। इस प्रतिबन्ध मे पीछे भूटान के अनूठे प्रकृति एवं पर्यावरण को अक्षुण्य रखना है। भारत सरकार भी इस प्रकार के कुछ सख्त कदम लक्ष्यद्वीप तथा अण्डमान–निकोबार द्वीप समूह के पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए उठाए हैं। लक्ष्यद्वीप के कुछ टापू जैसे कावारती आज प्रकृति पर्यटकों एवं साहसी पर्यटकों का एक जाना–माना स्थल है। परन्तु यहाँ एक समय में एक सीमा से अधिक लोगों को जाने की अनुमति नहीं दी जाती है। इसके अतिरिक्त इस द्वीप पर प्लास्टिक थैलियाँ ले जाना एवं कूड़ा कचरा फेंकना निसिद्ध है। इस प्रकार कावारती का पर्यावरण दूसरे द्वीपों तथा पर्यटक स्थल की तुलना में अधिक सुरक्षित है। इस प्रकार पर्यटन उद्योग के प्रत्यक्ष एवं परोक्ष योगदान से पर्यावरण संरक्षण में काफी सहायता पहुँची है।

पर्यटन एवं वन्य जीव संरक्षण

पिछले कुछ दशकों में पर्यटन उद्योग के साथ कई नए–नए आयाम जुड़ गए हैं। आज का पर्यटक सिर्फ समुद्र तट, पहाड़ अथवा तीर्थ स्थलों के भ्रमण से ही संतुष्ट नही होता है बल्कि उसे नित नए अनुभवों की लालसा होती है। अतः पर्यटन स्थल की सूची में नए किस्म के जगहों को भी शामिल किया जा रहा है और इन नवीन पर्यटन स्थलों में अभयारण्यों, राष्ट्रीय उद्यानों तथा संरक्षित वन प्रदेशों का महत्वपूर्ण स्थान है। शहर की तेज रफ्तार वाली जिन्दगी कोलाहल एवं कंक्रीट के जंगलों का विकल्प महानगर कतई नहीं हो सकता है और इसी भावना से प्रेरित होकर शहरी पर्यटक आज भीड़–भाड़ से दूर प्राकृतिक स्थानों पर अपनी छुट्टियाँ बिताना चाहता है। अतः पर्यटन, जैव विविधता एवं नैसर्गिक सौन्दर्य को अधिक महत्व देने लगे हैं। पर्यटन से उपार्जित धनराशि का एक हिस्सा पर्यावरण संरक्षण के लिए खर्च किया जाने लगा और इस प्रकार प्राकृतिक सौन्दर्य को कुछ हद तक अवश्य संरक्षण प्राप्त हुआ है। लोगों के बीच पक्षी दर्शन एवं दुर्लभ वनस्पतियों के प्रति बढ़ते आकर्षण के कारण पर्यटन उद्योग से जुड़े लोगों को पर्यावरण की महत्ता का अनुभव हुआ और विचारशील प्रबन्धक इस दिशा में काफी सक्रिय भी है। इस वैचारिक परिवर्तन का लाभ स्थान विशेष की पारिस्थितिकी को हुआ है।

पर्यावरण संरक्षण में पर्यटन के योगदान का एक अनुकरणीय उदाहरण वेनेजुएला में देखा जा सकता है। इस देश के कोजेडेस प्रान्त में "हाटो पिनेरो" नामक स्थान है। लगभग 80,000 हेक्टेयर में फैले इस स्थान पर पठार, नदियाँ, झरने, जंगल एवं अनूप प्रदेश (Wetland) सब कुछ उपलब्ध है। यहाँ पक्षियों की लगभग 300 प्रजातियों के अतिरिक्त स्तनपोषी तथा सरीसृप जानवरों की अनेकों प्रजातियाँ पाई जाती है। पिछले लगभग 40 वर्षों से "बायोटूरस" नामक संस्था यहाँ सफलतापूर्वक पर्यटन एवं पर्यावरण, दोनों के बीच सामन्जस्य बनाते हुए भ्रमणार्थियों के लिए काफी कार्य किया है। यहाँ प्रकृति पर्यटन के साथ–साथ पशु संकरण का भी कार्य चलता है। आज "हाटो पिनेरो" प्रकृति प्रेमी, पक्षी दर्शन के शौकीन, वैज्ञानिकों, छात्रों एवं शांत–सुरम्य वातारण में छुट्टियाँ बिताने के ईच्छुक लोगों के लिए स्वर्ग समान है। अफ्रीका का ""सेरेन्गेटी एक अन्य उपयुक्त उदाहरण है। बड़े–बड़े घासों एवं घने वृक्षों से परिपूर्ण यह इलाका अवैज्ञानिक खेती तथा अवैध शिकार के लिए मशहूर हुआ करता था। वस्तुतः इस स्थान पर अपराधियों का शासन एवं बोलबाला था। परन्तु पिछले तीन दशकों से जब सरकार ने इस स्थान पर पर्यटन को बढ़ावा देने की परियोजना बनाई तब स्थिति में काफी परिवर्तन आया। आपराधिक प्रवृति के लोग इस स्थान से पलायन कर गए हैं और स्थानीय लोगों की मदद से यहाँ पर्यटन उद्योग फलफूल रहा है। इसके परिणाम स्वरूप यहाँ के वानस्पतिक आच्छादन एवं वन्य जीवों की संख्या में क्रमशः 38 प्रतिशत एवं 26 प्रतिशत की

बढ़ोत्तरी हुई है। इसके विपरीत पर्यटन निषेध वाले पेंजारी पार्क में वन्य प्राणियों की स्थिति अत्यन्त दयनीय है। पार्क का प्रबन्धन उचित प्रकार से नहीं हो पा रहा है तथा इस दिशा में आर्थिक तंगी एक महत्वपूर्ण कारण है। इस प्रकार ऐसा पाया गया है कि पर्यटन से प्राप्त धनराशि से पर्यावरण संरक्षण में काफी सहायता होती है।

अत्यन्त ही नाजुक पर्यावरण के संरक्षण में पर्यटन उद्योग के योगदान का अत्यन्त ही रोचक उदाहरण अमेरीका के "मेन्डेनहाल ग्लेशियर" में देखा जा सकता है। मेन्डेनहाल ग्लेशियर दक्षिण–पूर्वी अलास्का में स्थित है तथा विशेषज्ञों के अनुसार आज से लगभग 3000 वर्ष पूर्व हिमयुग में इसका बनना शुरू हुआ था। मेन्डेनहाल ग्लेशियर प्रकृति का एक अद्‌भुत संरचना होने के साथ–साथ विभिन्न प्रकार के दुर्लभ जीव जन्तुओं और वनस्पतियों का प्राकृतिक आवास भी है। इस ग्लेशियर के प्राकृतिक स्वरूप को सुरक्षित रखने के लिए सन् 1925 में ही अमेरीकी सरकार ने इस राष्ट्रीय महत्व का धरोहर का दर्जा दिया। इसके पश्चात सन् 1980 में इसे राष्ट्रीय उद्यान का स्थान प्राप्त हुआ तथा 1986 में युनेस्कों ने इसे जीवमंडल संरक्षित स्थल का दर्जा दिया। सन् 1992 में मेन्डेनहाल को विश्व धरोहर का स्तर प्रदान किया है। इस प्रकार अमेरीकी ने मेन्डेनहाल के संरक्षण के लिए समय–समय पर उचित कदम उठाती रही है। परन्तु संरक्षण की जिम्मेवारी निभाने के साथ–साथ सरकार ने यहाँ हमेशा ही पर्यटन के विकास के लिए भी ठोस निर्णय लेने में किसी प्रकार के संकोच का कोई संकेत नहीं दिया तथा इसके परिणाम स्वरूप यहाँ आने के लिए सैलानियों के बीच काफी आकर्षण तथा उत्साह रहा। मेन्डेनहाल ग्लेशियर तक पर्यटकों को लाने के लिए जहाज, हेलीकॉप्टर अथवा हवाई जहाज का उपयोग करने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। परन्तु यातायात क्षेत्र में कार्यरत लोगों को तथा पर्यटन के अन्य सुविधाओं को उपलब्ध करवाने वालों का पर्यावरण संरक्षण के नियमों का सख्ती से पालन करना अनिवार्य होता है। पर्यटकों को मेन्डेनहाल ग्लेशियर के भूगोल, वन्य जीव, पौधों एंव नाजुक पर्यावरण के सम्बन्ध में जानकारी देने के लिए भरपूर पुस्तकें, नक्शे, तस्वीरें, कैसेट इत्यादि पर्यटकों को उपलब्ध करवाया जाता है। छोटी–छोटी फिल्मों के माध्यम से सैलानियों को ग्लेशियर पहुँचने के पूर्व ही काफी रोचक जानकारियाँ दी जाती हैं। इसके पश्चात जब सैलानी मेन्डेनहाल पहुँचता है तो वहाँ के पारिस्थितिक तन्त्र के प्रति वह अधिक संवेदनशील हो जाता है तथा ग्लेशियर का आनन्द लेने के दौरान उसे अपने हरकतों से कभी भी हानि पहुँचाने की सोच भी नहीं सकता। इस प्रकार पर्यटन उद्योग के उचित विकास ने मेन्डेनहाल के पर्यावरण को सुरक्षित रखने में काफी मददगार सिद्ध हुआ है। इससे एकदम विपरीत स्थिति भारत के गंगोत्री ग्लेशियर की है। यहाँ पर्यटन के विकास के लिए रचनात्मक कदम नहीं उठाया गया है। पहले वायुदूत ने अपनी सेवाएँ

पर्यटकों को देनी शुरू की थी परन्तु बाद में सुरक्षा की दृष्टिकोण से इसे भी बन्द कर दिया गया। परन्तु इन सबके बावजूद गंगोत्री की अवस्था आज अत्यन्त ही चिन्ताजनक है। जीयोलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के एक रिपोर्ट के अनुसार सन् 1935 से 1956 तक गंगोत्री की सीमा में 10 मीटर प्रतिवर्ष के दर से कमी आती थी। आज यह दर बढ़कर 27 मीटर प्रतिवर्ष तक हो गई है। अतः गंगोत्री की पर्यावरण क्षति ही हुई है जिसका स्पष्ट प्रभाव वहाँ की घटती वन्यजीव एवं वनस्पति के रूप में भी देखा जा सकता है। मेन्डेनहाल के समान यदि गंगोत्री क्षेत्र में भी पर्यटन को विकसित करने का सम्यक परियोजना बनाया जाय तो न सिर्फ इस क्षेत्र का महत्व बढ़ेगा बल्कि इसके प्रति लोगों की संवेदनशील भी बढ़ेगी। इन दोनो ही स्थितियों में यहाँ के पारिस्थितिकी को संवारने, सजाने तथा संरक्षित करने में सहायता मिलेगी। पर्यावरण संरक्षण के लिए समुचित धनराशि का प्रबन्ध करना हमेशा से ही एक दुष्कर कार्य रहा है। पर्यटन उद्योग से हुई आमदनी का एक हिस्सा इस पुनीत कार्य में लगाया जा सकता है। हमारे देश में भी अब धीरे–धीरे सरकार तथा आम लोग सभी पर्यावरण संरक्षण में पर्यटन की भागीदारी को भली भांती समझने लगे हैं। यह सुखद परिवर्तन हमें नाथूला दर्रे को पर्यटन के लिए खोले जाने के रूप में सबके सामने है। भारतीय सेना के सिफारिश पर 4,200 मीटर की ऊँचाई पर स्थित यह स्थान पिछले दिनों पर्यटकों के लिए खोल दिया गया। वैसे तो गंगटोक से 52 कि०मी० तक का सड़क रास्ता प्रकृति की अविस्मरणीय छटा को अपने आप में समेटे हुए है, परन्तु छिपसु ग्राम के पास स्थित सोमगो झील सम्भवतः पूरे गोलार्द्ध का सर्वाधिक खूबसूरत जलाशय है। यहाँ आने वाले पर्यटक निश्चय रूप से सर्वकालिक अनुग्रेण समेटकर ही लौटेगें। यहाँ से भूटान का छुमुलहारी पर्वत शिखर भी देखा जा सकता है। पर्यटन विकास के होड़ में यहाँ के पर्यावरण की अनदेखा भी नहीं की जा रही है। फोटो खींचना यहाँ सर्वथा वर्जित है तथा एक दिन में 200 से अधिक व्यक्तियों को नाथूला जाने की अनुमति नहीं दी जाती है। सप्ताह में मात्र तीन दिन ही यहाँ पर्यटक आ सकते हैं। नाथूला पोस्ट पर किसी भी व्यक्ति या पर्यटकों के जत्थे को आधे घंटे से अधिक रूकने नहीं दिया जाता है। इस प्रकार पर्यावरण से सामन्जस्य रखते हुए नाथूला में पर्यटन विकसित करने का प्रयास किया जा रहा है। इन सब परियोजनाओं का असर नाथूला के पर्यावरण पर पड़ रहा है और यह स्थान धीरे–धीरे विकसित हो रहा है। अतः पर्यटन को हर अवस्था में पर्यावरण के लिए हानिकारक मान लेना अनुचित होगा। किसी भी अन्य उद्योग के तरह जब पर्यटन भी निरंकुश हो जाता है तब उसका दुष्परिणाम अवश्यम्भावी हो जाता है।

वन्य जीव पर्यटन एवं हमारा पर्यावरण

हमारे देश में एक अजीब मानसिकता लगभग हर क्षेत्र में देखी जा सकती है–वह है विदेशी परिपाटी का अन्धानुसरण करना। पर्यटन के क्षेत्र में भी इस मानसिकता को देखा– परखा जा सकता हैं वन्य–प्राणी पर्यटन के क्षेत्र में अफ्रीका सरीखे देख काफी आगे बढ़ चुके हैं और अन्तराष्ट्रीय स्तर पर उन्होंने अपनी साख बना ली है। भारत में वन्य –प्राणी पर्यटन पिछले तीन दशकों से शनैः शनैः प्रगति कर रहा है। यहाँ ध्यान देन वाली बात यह है कि अपने देश में वन्य–प्राणी पर्यटन को चलाने के लिए कुछ मौलिक योजनाओं को शुरू करना ज्यादा फायदेमन्द होगा बजाय इसके कि हम अफ्रीकी अनुभवों तथा कार्यशैली को भारतीय परिवेश में आजमाने की कोशिश करें। वस्तुतः भारत में विभिन्न क्षेत्रों की भौगोलिक तथा पर्यावरणीय स्थिति किसी भी अन्य देश की तुलना में भिन्न है। हमारे यहाँ वन्य जीवों की किस्में तथा संख्या भी अन्य देशो की अपेक्षा अलग प्रकार का है। अतः पर्यटकों को आकर्षित करने के लिए किए जाने वाले वादे भी अपने देश के अनुरूप होना चाहिए। विदेशें में वन्य जीव पर्यटन प्रबन्धक अपने उपभोक्ताओं को आधुनिक सुविधाएँ देने के प्रति वचनबद्ध होते है। अतः वातानुकूलित गाड़ियॉ एवं टेन्ट, सुरूचिपूर्ण भोजन, मंहगे शराब इत्यादि उपलब्ध करवाना उनकी प्राथमिकता होती है। इस प्रकार का प्रबन्ध पर्यटन उद्योग को तात्कालिक लाभ भले ही दे दे, इसका दूरगामी परिणाम हमेशा नकारात्मक ही होगा।हमारे देश में जैव विविधता इतनी अधिक है और प्राकृतिक छटा इतनी मनोहारी है कि पर्याटक इन मूलभूत कारणो से ही आकर्षित किए जा सकते हैं तथा उन्हें अनावश्यक आधुनिक सुविधाओं का लालच देने की कोई आवश्यकता नहीं होगी।अफ्रीका के अनेक वन्य प्राणी पर्यटन आयोजक शेर का दर्शन करवाने की गारन्टी देते हैं। इसकी प्रकार नेपाल का पर्यटन उद्योग हाथी की सवारी करवाने की गारन्टी देते हुए अपने अभयारण्यों में पर्यटकों को आने का निमन्त्रण देता है। भारत के जंगलों में पाया–जाने वाला कीट–पंतग, छोटे जीव, पक्षी, पेड़–पौधे इत्यादि सभी अपना मूल आकर्षण रखते हैं तथा उनकी जीवन शैली काफी रोचक होती है। अतः किसी पशु विशेष पर वन्य जीव पर्यटन को केन्द्रित करने के अपेक्षा पर्यटकों को समग्र पर्यावरण में उपलब्ध किसी भी एक आयाम का अनुभव करवा देना अधिक रोमांचक होगा। शेर का दिखना कई कारणों पर निर्भर करता है और सम्भव है पूरे प्रयास के बावजूद पर्यटकों का जंगल के राजा का दर्शन नही हो पाए। परन्तु जंगल खूबसूरत पक्षियों की जल–क्रीड़ा, कीट–पंतग का सामाजिक जीवन शैली एवं विभिन्न प्रकार के आर्किड पुष्पों को आसानी से देखा समझा और सराहा जा सकता है। अतः सम्भावित पर्यटकों को समग्र पर्यावरण एवं जैव विविधिता के प्रति आकर्षित करना ज्यादा उचित

होगा। इसी प्रकार हाथी की सवारी वन्य प्राणी पर्यटन का एक प्रमुख आकर्षण माना जाता है। परन्तु वन्य प्राणी संरक्षण से जुड़े व्यक्तियों का मत इसके प्रतिकूल भी हो सकता है। यदि बहुतायत से हाथियों का प्रयोगब वन्य प्राणी पर्यटन में किया जाने लगा तो इससे इस भीमकाय जीव की संख्या एवं उपस्थिति पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसके विपरीत अभयारणयों एंव राष्ट्रीय उद्यानों में एक–दो किलोमीटर का भ्रमण न सिर्फ पर्यावरण के दृष्टिकोण से हितकर होगा बल्कि इससे पर्यटकों को एक नया ही अनुभव प्राप्त होगा और सम्भवतः उन्हें प्रकृति के किसी रहस्य को देखने – समझने का अनमोल अवसर प्राप्त हो जाए। अतः किसी अन्य देश से प्रतिस्पर्धा में फंसकर अस्वाभाविक एवं अहितकर वादा करने के अपेक्षा मौलिक क्रिया कलापों को अपनी योजना में शामिल करना ज्यादा लाभदायक होगा। परन्तु अपने व्यवसाय में मौलिकता लाने के लिए पर्यटन प्रबन्धकों को स्थान विशेष के पर्यावरण एवं जैव विविधता का पर्याप्त ज्ञान होना अनिवार्य है। जहाँ तक पर्यटकों का प्रश्न है उनमें असीमित लचीलापन होता है। सुविधाभोगी वर्ग के पर्यटक भी बाहर निकलने पर अनेको परिवर्तन सहज ही स्वीकार कर लेते है, बशर्ते उनका पर्यटन रोमांचक एवं यादगार हो। इसके अतिरिक्त पर्यटक प्रबन्धन से वही चाहता है जिसकें लिए उन्हे पहले से आश्वासित किया जाता है। अतः यह पूरी तरह से पर्यटन प्रबन्धक के ऊपर निर्भर है कि वह अपने ग्राहकों किस प्रकार से तैयार करता है। हमारे देश में वन्य प्राणी पर्यटन के नाम पर असीमित संसार–धन तथा विकल्प मौजूद हैं। इस विविधता को ध्यान में रखते हुए वन्य जीव पर्यटन की रूप रेखा ऐसी होनी चाहिए जिससे किसी क्षेत्र अथवा प्राणी विशेष पर आवश्यकता से अधिक भार नही पड़े और वन्य प्राणी पर्यटन वन्य–प्राणियों के लिए भी लाभकारी साबित हो।

वन्य जीव पर्यटन :– समस्याएँ एवं संभावनाएँ

आज निरन्तर बढ़ते प्रदूषण एवं शहरी जिन्दगी की समस्याओं से कुछ दिनों के लिए छुटकारा पाने के लिए वन्य जीव पर्यटन के प्रति लोगों का रूझान बढ़ रहा है। इसके परिणाम स्वरूप राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य प्राणी अभयारण्य, पर्यटन स्थल के रूप में विकसित हो रहे हैं। परन्तु वन्य–जीव पर्यटन के उचित विकास के रास्ते में कुछ समस्याएँ भी आ रही है। सर्वप्रथम वन्यजीव प्रबन्धकों एवं पर्यटन प्रबन्धकों का उद्देश्य एवं विचारधारा कभी–कभी विपरीत प्रतीत होता लगता है। उदाहरण के स्वरूप वन्य जीव प्रबन्धक अभयारण्यों एवं राष्ट्रीय उद्यानों में न्यूनतम मानव क्रिया कलापों की वकालत करते है। ऐसी धारणा है कि पर्यटन विकास से इन क्षेत्रों में मनुष्यों का आना जाना अपेक्षकृत अधिक होने लगेगा तथा पर्यटकों के लिए उचित सुविधओं की व्यवस्था करने के नाम पर होने वाली गतिविधियों वन्यजीव के लिए अहितकर होगा। पर्यावरण विदों के इस संदेह को पूर्णतः नकारा नही जा सकता है। वस्तुतः असीमित पर्यटन से मात्र अभयारण्य ही नही बल्कि पृथ्वी

के किसी भी भूभाग को खतरा हो सकता है। वन्य जीव अभयारण्यों की पारिस्थितिक तंत्र अपेक्षाकृत अधिक संवेदनशील होती है अतः इनको होने वाली हानि और ज्यादा खतरनाक हो सकता है। परन्तु ऐसे भी कई उदाहरण हमारे सामन मौजूद हैं जिसमें पर्यटन को उचित बढ़ावा देकर न सिर्फ आर्थिक लाभ प्राप्त हुआ है बल्कि इसके परिणामस्वरूप वन्य प्राणियों एवं प्राकृतिक स्थलों के उचित देखभाल में भी सफलता प्राप्त की गई है। पूर्वी अफ्रीका के सेरेन्गेटी क्षेत्र का उदाहरण हमारे लिए अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। सन् 1970 के पूर्व तक यह क्षेत्र गैर कानूनी शिकार एवं असामाजिक गतिविधियों के लिए कुख्यात था। सत्तर के दशक के उत्तरार्द्ध में केन्या तथा तंजानिया सरकार के सम्मिलित प्रयास से सेरेन्गेटी को वन्य जीव अभयारण्य में बदल दिया गया तथा शीध्र ही इस क्षेत्र को पर्यटकों के लिए खेल दिया गया। पर्यटन उद्योग के प्रयास से न सिर्फ इस क्षेत्र का सामाजार्थिक विकास हुआ बल्कि यहॉ होने वाले आपराधिक घटनाओं में भी कमी आई। इसी प्रकार मध्य अफ्रीका के सेन्ट फ्लोरिस प्राकृतिक उद्यान को भी पर्यटन विकास से काफी लाभ हुआ हैं। यहॉ पर्यटन से मिलन वाली धनराशि का एक हिस्सा वन्य जीवों के उचित देखभाल पर खर्च किया जाता है और इसका परिणाम जन्तुओं के बढ़ती आबादी के रूप में हमारे सामने है। इसके विपरीत पेन्जारी उद्यान जहाँ पर्यटन आज भी वर्जित है अत्यन्त दयनीय अवस्था में हैं। यहॉ गैर कानूनी शिकार एवं वृक्षों का अंधाधुंध काटा जाना जारी है। अतः यह कहना उचित नही होगा कि पर्यटन प्रारम्भ करने से राष्ट्रीय उद्यानों और अभयारण्यों को हानि होना निश्चित है। अगर हमारा प्रबन्धन उचित प्रकार से है और पर्यटन विकास के क्रम में हम वन्यप्राणियों के हितों को अनदेखा नही करते हैं तो पर्यटन एवं पर्यावरण का समन्वय अति लाभप्रद साबित हो सकता हैं।

वन्यजीव पर्यटन के पर्याप्त विकास के लिए सरकार के विभिन्न विभागों और स्थानीय लोगों के बीच समन्वय का होना अति आवश्यक है। वर्त्तमान परिस्थिति में विभिन्न विभागों के बीच आपसी ताल मेल का नितान्त अभाव पाया गया है और इसके परिणाम स्वरूप प्रकृति पर्यटन का अपेक्षित विकास भी नही हो पाया है। उदाहरण के तौर पर वन एवं पर्यावरण विभाग राष्ट्रीय उद्यानों एवं अभयारण्यों में मनुष्य की उपस्थिति मात्र से चिंतित हो जाते हैं जबकि पर्यटन विभाग का उद्देश्य इन स्थानों पर अधिक से अधिक सैलानियों को आकर्षित करना होता है। पहली नजर में परस्पर विरोधी दिखने वाली विचार धाराओं के आपसी समन्वय से तथा एक मध्यम मार्ग निकालने से ही अभयारण्यों की अवस्था में सुधार हो सकता है साथ ही साथ पर्यटन का भी विकास हो सकता है। अतः प्रकृति पर्यटन एवं वन्य जीव पर्यटन के विकास के लिए पर्यावरण विभाग एवं पर्यटन विभाग को मिलकर परियोजना तैयार करनी चाहिए तथा उसके कार्यान्वयन में भी इन विभागों की सम्मिलित भागीदारी अनिवार्य है। यहाँ नीतिनिर्धारकों को यह भी स्पष्ट रूप से समझ लेना चाहिए

कि स्थानीय लोगों की उचित भागीदारी के अभाव में न तो पर्यटन का विकास सम्भव है और न ही अभयारण्यों की सुरक्षा। पिछले दिनों प्राप्त अनेक अनुभवों से यह बात निरन्तर स्पष्ट होकर हमारे सामने आया है। राजस्थान के सरिस्का व्याघ्र अभयारण्य में किए गए अध्ययन का परिणाम काफी महत्त्वपूर्ण है। इस अभयारण्य में 25 बाघ और लगभग 65 चीते रहते हैं। चौंकाने वाली बात यह है कि कुल 1300 आबादी वाले 25 छोटे–छोटे गॉव इस अभयारण्य की सीमा के भीतर आते हैं। इन ग्राम वासियों के पास 20000 के करीब पालतू जानवर हैं। इन पालतू जानवरों और वन्य प्राणियों के बीच अक्सर विभिन्न कारणों से प्रतिस्पर्द्धा होती है जिसका दुष्परिणाम वन्यप्राणी और ग्रामीणों दोनों को होता है। सरकार इन ग्रामीणों को अन्यत्र बसाने का प्रयास कर रही है परन्तु इसकी सफलता अभी भी देखा जाना है। एक दूसरी समस्या इस अभयारण्य से होकर जयपुर अलवर राजमार्ग का गुजरना है। आवागमन की अधिकता से न सिर्फ वन्य जीव परेशान होते हैं बल्कि अक्सर वे दुर्घटना के शिकार भी हो जाते है। अगर पर्यटन एवं पर्यावरण विभाग समन्वित योजना बनाए और स्थानीय ग्रामवासियों की भागीदारी निश्चित की जाय तो सुरक्षित क्षेत्र में रहे लोगों को अन्यत्र बसाया जा सकता है। स्थानीय लोगों को पर्यटन उद्योग में समायोजित कर के उनका सुरक्षित क्षेत्र पर निर्भरता को कम किया जा सकता है।

प्रकृति पर्यटन एवं स्थानीय आबादी के बीच संवेदनशील सम्बन्ध का एक अन्य उदाहरण झारखण्ड क्षेत्र में देखा जा सकता है। झारखण्ड में जमशेदपुर के समीप दलमा वन्य प्राणी अभयारण्य तथा गिरिडीह जिले में पारसनाथ पहाड़ी के तलहटी में अवस्थित तोपचांची वन्यप्राणी अभयारण्य अपनी प्राकृतिक छटा एवं वनसम्पदा के लिए महत्त्वपूर्ण है। इन दोनों स्थानों पर पर्यटक आते हैं तथा यहॉ पर्यटन विकास की संभावनाए असीमित है। परन्तु वर्ष में एक बार यहॉ स्थिति तनावपूर्ण हो जाती है और स्थानीय लोगों तथा वन विभाग के पदाधिकारियों का अप्रत्यक्ष आमना–सामना भी हो जाया करता है। मई के महीने में आदिवासी समुदाय का शिकार पर्व आता है जिसे कही "बिसु शिकार" तो कही " बुंडू" के नाम से जाना जाता है। इस पर्व के दौरान तीर–धनुष तथा भाले से लैस हजारों की संख्या में लोग सुरक्षित क्षेत्र में प्रवेश करते हैं तथा आखेट करके जानवरों का शिकार किया जाता है। रात में रौशनी के लिए जंगल में आग भी लगाया जाता है जिसका दुष्परिणाम वनस्पति और जानवरों दोनों को झेलना पड़ता है। पिछले वर्ष सम्पन्न इस आखेट पर्व में सिर्फ दलमा वन्य प्राणी अभयारण्य में तीन भौंकने वाले हिरण अपनी जान गँवा बैठे। पिछले वर्ष इसी प्रजाति के ग्यारह जानवर मारे गए थे। स्मरण रहे, हिरण की इस प्रजाति को विलुप्त प्रायः जानवरों की सूची में रखा गया है। इसके अतिरिक्त, बंदर, मोर, जंगली गिलहरी इत्यादि का शिकार भी धड़ल्ले से हुआ करता है। अधिकारियों के अनुसार पिछले दस वर्षो में 300

से अधिक वन्यप्राणी आखेट पर्व के दौरान मारे जा चुके हैं। वैसे प्रतिवर्ष मारे जाने वाले जीवों की संख्या में निरन्तर कमी आ रही है। निषेधाज्ञा को तोड़ कर अभयारण्य में प्रवेश करने और शिकार करने वाले लोगों की संख्या में भी कमी आई है। पिछले वर्षो जहाँ औसतन 5000 व्यक्ति दलमा के जंगलों में प्रवेश करते थे वहॉ इस वर्ष मात्र 2000 लोग ही यहॉ घुस पाए। इसी प्रकार का एक उत्सव तोपचांची अभयारण्य के इर्द गिर्द पारसनाथ पर्वत की तराई में भी सम्पन्न होता है। पर्वत की तराई में मेले का आयोजन होता है। मेले में मौज–मस्ती के पश्चात स्थानीय निवासी सुरक्षित जंगल में प्रवेश करते हैं तथा भेड़िया, तेन्दुआ, जंगल सुअर, हिरण इत्यादि का शिकार करते है। पिछले कुछ वर्षो से वन एवं पर्यावरण मंत्रालय के प्रयास से शिकार होन वाले पशुओं की संख्या में काफी कमी आई है। अधिकारी स्थानीय आदिवासियों को वन्य प्राणियों के महत्त्व को समझाने में प्रयासरत हैं तथा इसका अच्छा परिणाम भी सामने आया है। इस दिशा में पर्यटन विभाग की सक्रियता से और भी अनुकूल परिणाम आने की संभावना प्रबल है। आदिवासियों के इस वार्षिक मेले एवं उत्सव को सुरक्षित क्षेत्र के बाहर तक ही सीमित रखने एवं उसमें पर्यटकों की भागीदारी से स्थानीय लोगों को पारंपरिक मौज–मस्ती के साथ ही आर्थिक उपार्जन भी होने लगेगा और निश्चय ही उनका आखेट के प्रति लोभ कम हो जाएगा। यहॉ यह स्पष्ट कर देना आवश्यक होगा कि आदिवासी पर्व के नाम पर अनेक गैर आदिवासी लोग विशेषकर छुटभये नेतागण भी दल–बल के साथ शिकार करने निकल पड़ते हैं। पिछले वर्ष प्रशासन की चौकसी के कारण बाहर से आए ऐसे लोगों को सफलतापूर्वक सुरक्षित क्षेत्र से बाहर रखा गया है। इस दिशा में व्यापक सफलता के लिए स्थानीय लोगों को शिक्षित करना अति आवश्यक है। जन चेतना जगाने का अच्छा परिणाम कई राष्ट्रीय उद्यानों में देखा गया है। अम्बोसेली उद्यान में पर्यटकों को प्रवेश के लिए शुल्क के रूप में अच्छी खासी रकम देनी होती है। एक अध्ययन के अनुसार इस उद्यान का एक शेर, पन्द्रह वर्षो की अवधि में 5,15,000 अमरीकी डालर तक का उपार्जन कर लेता है। इस उद्यान के आस–पास रह रहे लोगों को अब इतना ज्ञान हो गया है कि उनके लिए शेर को मारने के अपेक्षा उसे जीवित रखना अधिक लाभप्रद है। कुछ इसी प्रकार का नवीन प्रयोग नेपाल के चितवन राष्ट्रीय उद्यान के समीप किया गया है। इस उद्यान के समीप रहने वाले लोगों को हाथियों को खिलाये जाने वाले चारा उपजाने की जिम्मेवारी दी गई है। इससे स्थानीय लोगों के लिए उपार्जन का साधन मिल गया है साथ ही उद्यान के प्रबन्धन में उनकी भागीदारी से वन्यप्राणी संरक्षण एवं पर्यटन विकास में भी सहायता मिली है। इस प्रकार ऐसे कई सुखद अनुभव हमारे सामने हैं जिसमें पर्यावरण विभाग, पर्यटन विभाग तथा स्थानीय लोगों की सहभागिता से वन्यजीव पर्यटन का अनूठा प्रयोग सफल हुआ है।

वन्य जीव पर्यटन के विकास तथा साथ ही साथ सुरक्षित क्षेत्रों के पर्यावरण की रक्षा के लिए विभिन्न स्तर पर शिक्षा का प्रसार तथा जागरूकता फैलाना अति आवश्यक है।जागरूकता बढ़ाने तथा शिक्षित करने से हमारा तात्पर्य सिर्फ स्थानीय लोगों को ही उचित दिशा–निर्देश देना नहीं है। वस्तुतः सबसे पहले पर्यटन उद्योग से जुड़े विभिन्न लोगों को वन्य जीवों के बारे में उचित जानकारी देना अति आवश्यक है। पर्यटन व्यवस्थापकों को अपने कार्य क्षेत्र में पड़ने वाले अभयारण्यों तथा राष्ट्रीय उद्यानों के भूगोल तथा पर्यावरणीय विशेषताओं का पूर्ण ज्ञान होना अनिवार्य है अन्यथा जाने–अनजाने ऐसे पर्यटन कार्यक्रमों का पारिस्थितिकी को हानि हो सकती है। ऐसा होन पर पर्यटन उद्योग का कलंकित होना निश्चित है तथा इस उद्योग के आलोचकों को सम्बल मिलना भी संभव हो जाएगा। अतः वन्य जीव पर्यटन के प्रबन्धन में वन्य प्राणी विशेषज्ञों को भी शामिल करना एक उचित कदम होगा। पर्यटन प्रबन्धकों के साथ–साथ पर्यटकों को भी किसी अभयारण्य में भेजने के पूर्व उस स्थान विशेष के बारे में पर्याप्त जानकारी देना ऐ उचित कदम होगा। अलग–अलग अभयारण्यों में उपलब्ध वन्यजीव तथा वनस्पति भिन्न भिन्न होती हैं। पर्यटकों को यदि पहले ही इनके बारे में जानकारी दे दी जाए तो उनका पर्यटन और भी यादगार साबित हो सकता है। इससे पर्यटकों के मन मस्तिष्क में प्रकृति के प्रति रूझान और आदर बढ़ेगा और इन भावनाओं से सुसज्जित व्यक्ति कभी भी प्रकृति को हानि नहीं पहुँचाएगा। सुरक्षित क्षेत्र में प्रवेश करने के पूर्व पर्यटकों के मन में प्राणी विशेष को देखने की लालसा होती है। जैसे काजीरंगा तथा गिर अभयारण्यों में जाने वाले पर्यटक क्रमशः गैड़ा तथा शेर देखने तक ही अपने यात्रा को सीमित रखते है। परन्तु वास्तविकता यह है कि प्रकृति का हर कोना रोमांच और कौतुहल से भरा होता है तथा आवश्यकता इस बात की है कि उस स्थान विशेष के घटकों की पूर्ण जानकारी हो। समुचित सूचनाओं से लैस सैलानी निश्चित तौर पर वन्य जीव पर्यटन का सर्वाधिक मजा ले सकते हैं और उनका सैर अधिक यादगार साबित हो सकता है।अतः कुछ मूलभूत बिन्दुओं पर ध्यान देकर वन्य जीव पर्यटन का उचित विकास किया जा सकता है।

झारखंड के कुछ प्रमुख वन्य जीव पर्यटन स्थल

झारखंड़ प्रदेश प्राचीन काल से ही प्राकृतिक छटा, सघन वन एवं वन्य प्राणियों के लिए प्रसिद्ध रहा है। औघोगिक विकास के नाम पर झारखंड के प्रकृति को पिछले कुछ दशकों में काफी नुकसान पहुँचाया जा चुका है। फिर भी इस क्षेत्र में स्थित अभयारण्यों तथा राष्ट्रीय उद्यान पर्यटन के लिए सर्वथा आकर्षक रहे हैं। आज यहॉ समुचित पर्यटन विकास की काफी आवश्यकता हैं। झारखंड़ प्रदेश में पड़ने वाले इन पर्यटन स्थलों में पलामू राष्ट्रीय उद्यान दलमा अभयारण्य, तोपचांची अभयारण्य तथा हजारीबाग राष्ट्रीय उद्यान प्रमुख हैं।

पलामू राष्ट्रीय उद्यान हजारीबाग से 258 कि०मी० तथा कोलकाता से 574 कि०मी० की दूरी पर स्थित है। इस राष्ट्रीय उद्यान का मूल क्षेत्रफल 216 वर्ग कि०मी०है परन्तु इसके चारों ओर लगभग 1026 वर्ग कि०मी० का क्षेत्र व्याघ्र संरक्षण परियोजना अन्तर्गत आता है। गर्मी में यहाँ का तापमान 40^0 C तक पहुँच जाता है जबकि सर्दी के मौसम में तापमान गिर कर 3^0 C तक आ जाता है।

इस राष्ट्रीय उद्यान की औसत ऊँचाई 1000 फुट है। वैसे तो यह उद्यान पूरे वर्ष पर्यटकों के लिए खुला रहता है परन्तु अक्टूबर से अप्रैल तक का महीना सैर के लिए ज्यादा अनुकूल होता है। पालामू उद्यान में ठहरने के लिए विभिन्न सरकारी विभागों के गेस्ट हाऊस तथा प्राईवेट होटल भी उपलब्ध हैं। वन्य जीवों को उनके प्राकृतिक निवास में देखने के लिए पाँच मीनारें बनी हुई है। वन विभाग के द्वारा उपलब्ध कराए गए वाहनों के द्वारा इस राष्ट्रीय उद्यान के भीतर तीस कि० मी० तक जाया जा सकता है। हाथी की सवारी करके भी पलामू राष्ट्रीय उद्यान का भ्रमण किया जा सकता है। इस राष्ट्रीय उद्यान का सर्वाधिक चर्चित स्थल बेतला है। प्राकृतिक छटा से परिपूर्ण इस उद्यान में पाए जाने वाले वन्य जीवों की सूची काफी लम्बी है। यहाँ हिरणों तथा हाथियों के झुंड़ नील गाय साम्बर चीतल लंगुर जंगली बिल्ली एवं भेड़िया काफी संख्या में पाए जाते हैं। वनस्पति आर्किड़ की विभिन्न प्रजापतियाँ फर्न तथा अन्य छोटे पौधे काफी अधिक संख्या में उपलब्ध है। पलामू राष्ट्रीय उद्यान से होकर औरंगा तथा कोयल नदियाँ गुजरती हैं तथा जाड़े के मौसम में इन नदियों के आस पास हजारों की संख्या में प्रवासी पक्षियों की विभिन्न प्रजातियों देखी जा सकती हैं। अतः पक्षी दर्शन के शौकीन सैलानियों के लिए भी यह एक आकर्षक पर्यटन स्थल है।

तोपचांची वन्य जीव अभयारण्य धनबाद से लगभग 37 कि० मी० की दूरी पर राष्ट्रीय राज मार्ग 2 पर स्थित है। सन् 1915 में झरिया कोयलांचल को जलापूर्ति करने के लिए पारसनाथ पर्वत की तराई में इस कृत्रिम झील को बनाया गया। कालान्तर में इस झील के चारों ओर के वन क्षेत्र को अभयारण्य का दर्जा दिया गया। प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण इस अभयारण्य में यदा–कदा बाघ देखा जा सकता है। कुछ दशक पूर्व तक रात्रि में अक्सर बाघ तोपचांची झील में पानी पीने आया करते थे आज भी तेन्दुआ भेड़िया जंगली बिल्ली इत्यादि जानवर यहाँ उपलब्ध हैं। उचित देख–रेख के अभाव में आज तोपचांची अभयारण्य की अवस्था अच्छी नहीं है। वृक्षों के अवैध कटाई से वन्य जीवों का प्राकृतिक आवास नष्ट होता जा रहा है। जब कभी भी वन्य जीव भटक कर गाँवों में जाते हैं तब ग्रामीणों के द्वारा मार दिए जाते हैं। अक्टूबर से जनवरी तक के समय में तोपचांची में आनेवाले

पर्यटकों की संख्या काफी अधिक होती है। अधिकांश पर्यटक पिकनिक मनाने आते हैं और अपने पीछे प्लास्टिक थैलियाँ तथा अन्य कचरे का अम्बार छोड़ जाते हैं। समुचित प्रबन्धन से तोपचांची अभ्यारण्य एक महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल के रूप में उभर सकता है।

हजारीबाग राष्ट्रीय उद्यान झारखंड क्षेत्र का एक अन्य महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल है। हजारीबाग –पटना राष्ट्रीय राजपथ संख्या–33 पर शहर से 17 कि० मी० की दूरी पर राष्ट्रीय उद्यान स्थित है। उद्यान के भीतर लगभग 10 कि० मी० जाने पर वन विभाग का गेस्ट हाऊस स्थित है। इस राष्ट्रीय उद्यान का निर्माण सन् 1954 में हुआ। उद्यान के क्षेत्रफल 183.89 वर्ग कि० मी० है। हजारीबाग राष्ट्रीय उद्यान का औसत ऊँचाई 1800 फीट है। अक्टूबर से अप्रैल तक का महीना पर्यटन के लिए अनुकूल होता है। इस राष्ट्रीय उद्यान में शाल, पलाश, सेमल, अर्जुन, खैर, बबूल इत्यादि वृक्षों की भरमार है। इसके अतिरिक्त लगभग 15 प्रजातियों के फर्न तथा ऑर्किड की 12 प्रजातियाँ भी पाई जाती हैं। वन्य जीव में सांभर नीलगाय भालू तेन्दुआ जंगली सूअर इत्यादि आसानी से देखे जा सकते हैं। यदा कदा बाघ का देखा जाना भी संभव है। हजारीबाग राष्ट्रीय उद्यान उचित प्रबन्धन के अभाव में आज स्वस्थ्य स्थित में नहीं है। वृक्षों की अवैध कटाई से जंगली जानवरों का प्राकृतिक आवास नष्ट हो रहा है। पार्क से होकर गुजरने वाले मार्गों पर आवागमन होने के कारण भी जानवर भयभीत रहते हैं तथा दुर्घटना के शिकार भी हो जाते हैं।

जमशेदपुर के निकट स्थित दलमा वन्य प्राणी अभयारण्य भी पर्यटन का एक प्रमुख केन्द्र बन सकता है। घने जंगल एवं हरितीया से परिपूर्ण इस अभ्यारण्य में लगभग 90 हाथी प्राकृतिक जीवन बसर कर रहे हैं। 35 से 40 हाथी अक्सर आस–पास के जंगलों से यहाँ प्रवेश करते रहते हैं। लौह नगरी जमशेदपुर से निकटता के कारण यहाँ आसानी से पहुँचा जा सकता है।

वन्य जीव पर्यटन के कुछ दिशा–निर्देश

प्रकृति को समझने तथा उनका भरपूर आनन्द लेने के लिए वन्य जीव पर्यटन करना एक उचित निर्णय हो सकता है बशर्ते कुछ मूलभूत दिशा–निर्देशों का पालन किया जाए –

1. उद्यान अथवा अभयारण्य में सम्बन्धित अधिकारी से अनुमति प्राप्त करके ही प्रवेश करना चाहिए।

2. प्राकृतिक स्थल पर शोर–शराबे से परहेज करते हुए दृश्यावलोकन को प्राथमिकता देनी चाहिए।

3. पौधों एवं झाड़ियों को किसी प्रकार की क्षति नहीं पहुँचानी चाहिए। इससे अनेक वन्य प्राणियों के प्राकृतिक आवास के नष्ट होने का खतरा रहता है।

4. यथासम्भव दृश्य मीनारों का उपयोग करना चाहिए।

5. धूम्रपान एवं अन्य कारणों से आग जलाना सर्वथा अहितकर होता है।

6. वन्य प्राणियों को देखते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि उन्हें किसी प्रकार की बाधा नहीं पहुँचे।

7. वन क्षेत्र को पिकनिक स्थल समझने की भूल नही करनी चाहिए।

8. प्राकृतिक दृश्यों का अवलोकन, उसके प्रति समर्पण भाव के साथ ही संम्भव है। प्रकृति पर विजय पाने की अभिलाषा से पर्यटन करना अनुचित होगा।

पर्यटन के लिए उपयुक्त कुछ प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान

अण्डमान एवं निकोबार द्वीप समूह

1. **उत्तरी भुटो द्वीप** : जिला – अण्डमान, निकटस्थ हवाई अड्डा – पोर्ट ब्लेयर (लगभग 200 कि०मी०), क्षेत्रफल – 4400.00 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय–जनवरी तथा फरवरी महीने, प्रमुख वन्य जीव – डॉलफिन एवं विभिन्न प्रजातियों के सरीसृप जीव।

2. **दक्षिणी भुटो** : जिला – अण्डमान, निकटस्थ हवाई अड्डा – पोर्ट ब्लेयर, क्षेत्रफल – 300.00 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय – जनवरी से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – डॉलफिन एवं अन्य जलीय जीव जन्तु।

3. **सन्डल चोटी** : जिला – अण्डमान, निकटस्थ हवाई अड्डा – पोर्ट ब्लेयर, क्षेत्रफल – 3318.43 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय – नवम्बर से अप्रैल तक, प्रमुख वन्य जीव – जंगली सुअर, विभिन्न प्रजातियों के छिपकली, मगरमच्छ एवं अनेक पक्षी प्रजाति।

अरूणाचल प्रदेश

1. **नामड़प** : जिला – त्रियप, निकटस्थ हवाई अड्डा – डिब्रूगढ़ (56 कि०मी०), क्षेत्रफल – 180.82 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय – अक्टूबर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – बाघ, चीता, कस्तूरी मृग, सफेद चीता, मिस्मी, जंगली भैंस, हॉर्नबिल इत्यादि।

असम

1. **काजीरंगा :** जिला – जोरहाट, निकटस्थ हवाई अड्डा – जोरहाट (90 कि०मी०), क्षेत्रफल – 4299.80 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय – अक्टूबर, प्रमुख वन्य जीव – शेर, चीता, गैंडा, जंगली भैंस, हाथी, हिरण, साँपो की विभिन्न प्रजातियाँ, हौर्नबिल इत्यादि।

गुजरात

1. **गिर राष्ट्रीय उद्यान :** जिला – जूनागढ़, निकटस्थ हवाई अड्डा – सासन, क्षेत्रफल – 35948.00 हेक्टेयर, पर्यटन का उचित समय – दिसम्बर से मई तक, प्रमुख वन्य जीव – शेर, चीता, चीतल, घड़ियाल, अजगर, मोर इत्यादि।
2. **जामनगर तट :** जिला – जामनगर, निकटस्थ हवाई अड्डा – जामनगर, क्षेत्रफल – 16289.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – नवम्बर से जनवरी, वन्य जीव – कछुए की विभिन्न प्रजातियाँ जैसे – रिड़ले, ओलिव, ग्रीन सी तथा अन्य समुद्री जीव।

हिमाचल प्रदेश

1. **कुल्लू हिमालय :** जिला – कुल्लू, निकटस्त हवाई अड्डा–जोगिन्दर नगर (100 कि०मी०), क्षेत्रफल – 1736000.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – सितम्बर से नवम्बर तथा अप्रैल से जून तक, वन्य जीव – कस्तूरी मृग, चीता, उड़न गिलहरी, पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ एवं बहुरंगी पेड़–पौधे।

जम्मू कश्मीर

1. **डकल गाँव :** जिला – श्रीनगर, निकटस्त हवाई अड्डा–श्रीनगर (30 कि०मी०), क्षेत्रफल – 14100 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – नवम्बर से फरवरी तथा जून से मार्च तक, वन्य जीव – हिमचील, कस्तूरी मृग इत्यादि।
2. **हेमी लेट :** जिला – लेह, निकटस्त हवाई अड्डा– श्रीनगर, क्षेत्रफल – 3408.11 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – नवम्बर से फरवरी, वन्य जीव – हिमचीता एवं अनेकों पक्षी प्रजातियाँ।

कर्नाटक

1. **बान्दीपुर :** जिला – मैसूर, निकटस्त हवाई अड्डा–नर्जनगुड़ (55 कि०मी०), क्षेत्रफल – 80400 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – नवम्बर से अप्रैल, वन्य जीव – बाघ, चीता, हाथी, उड़न गिलहरी, चीतल, सरीसृप एवं परिंदो की प्रजातियाँ।

2. **बन्नेर बंग घहालोर :** जिला – बंगलोर, निकटस्त हवाई अड्डा–बंगलोर (25 कि०मी०), क्षेत्रफल – 10434.82 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – सितम्बर से जनवरी, वन्य जीव – चीता तथा हाथी।

3. **नागर होल कोड़ागू :** जिला – मैसूर, निकटस्त हवाई अड्डा–मैसूर (100 कि०मी०), क्षेत्रफल – 57155.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – दिसम्बर से मार्च तक, वन्य जीव – चीता, हाथी, बाघ, भालू इत्यादि।

केरल

1. **एर्नाकुलम :** जिला – एर्नाकुलम, निकटस्त हवाई अड्डा–कोचिन (140 कि०मी०), क्षेत्रफल – 9700.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – नवम्बर से मई तक, वन्य जीव – चीता, हाथी, शेर, बाघ, बंदरों के विभिन्न प्रजातियाँ अजगर इत्यादि।

2. **पेरियार :** जिला – कोट्टायम, निकटस्त हवाई अड्डा–कोट्टायम (114 कि०मी०), क्षेत्रफल – 77.700 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – दिसम्बर से मई तक, वन्य जीव – शेर एवं हाथी।

3. **साइलेन्ट पाईघाट घाटी :**जिला – कोयम्बाटूर, निकटस्त हवाई अड्डा–पालघाट (99 कि०मी०), क्षेत्रफल – 8951.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त समय – सितम्बर से मार्च।

मध्य प्रदेश

1. **बान्धगढ़ :** जिला – शाहड़ोल/जबलपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–जबलपुर (160 कि०मी०), क्षेत्रफल – 43364.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय –मार्च से जून तक, वन्य जीव – चीता, बाघ, चीतल, भालू इत्यादि।

2. **इन्दिरा :** जिला – रायपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–जबलपुर (186 कि०मी०), क्षेत्रफल – 125837.20 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उत्तम समय – फरवरी से अप्रैल, वन्य जीव–बाघ, भेड़िया, हिरण, जंगली भैंस इत्यादि।

3. **कान्गर घाटी :** जिला – रायपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–जबलपुर (30 कि०मी०), क्षेत्रफल – 20.000 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – मार्च से जून तक, वन्य जीव – चीता, बाघ, भेड़िया, मगरमच्छ एवं अजगर।

4. **कान्हा बालाघाट** : जिला – जबलपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–जबलपुर (160 कि०मी०), क्षेत्रफल – 94000 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – फरवरी से जून तक, वन्य जीव – हिरण, भालू, भेड़िया, बाघ, चीता, अजगर, मोर इत्यादि।

5. **माधव** : जिला – शिवपुरी, निकटस्त हवाई अड्डा–ग्वालियर (100 कि०मी०), क्षेत्रफल – 15.600 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – अप्रैल से जून तथा अक्टूबर से फरवरी तक।

6. **संजय सरगुजा** : जिला – खजुराहो, क्षेत्रफल – 193801 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उत्तम समय – जनवरी से जून तक, वन्य जीव – चीता, बाघ, भेड़िया आदि।

7. **पन्ना छत्तरपुर** : जिला – पन्ना, निकटस्त हवाई अड्डा–सतना (90 कि०मी०), क्षेत्रफल – 542665 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – दिसम्बर से अप्रैल, वन्य जीव – चीता, बाघ, चीतल, भालू, भेड़िया इत्यादि।

8. **संजय सिद्धी सरगुजा** : जिला – खजुराहो, निकटस्त हवाई अड्डा–जोरा, क्षेत्रफल – 193,801.00 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – जनवरी से जून, वन्य जीव – चीता, बाघ, भेड़िया, चीतल आदि।

9. **सातिन होशंगुरा** : जिला – भोपाल, निकटस्त हवाई अड्डा–भोपाल (55 कि०मी०), क्षेत्रफल – 50,244 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – जनवरी से जून तक, वन्य जीव – बाघ, चीता, हॉर्नबिल एवं अन्य पक्षी।

महाराष्ट्र

1. **नेगाँव** : जिला – भान्ड्रा, निकटस्त हवाई अड्डा–देवला गाँव (18 कि०मी०), क्षेत्रफल – 13,388 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वाधिक अनुकूल समय – नवम्बर से जनवरी तक, प्रमुख वन्य जीव – शेर, चीता, जंगली बिल्ली, हिरण, अजगर इत्यादि।

2. **पेन्थ** : जिला – नागपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–नागपुर, क्षेत्रफल – 25726 हेक्टेयर।

3. **संजय** : जिला – थाने, निकटस्त हवाई अड्डा–सान्ता क्रूज (3 कि०मी०), पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – अक्टूबर से मार्च तक, वन्य जीव – मगर, घड़ियाल, ऑस्प्रे, समुद्री चील इत्यादि।

4. **टाड़ोबा :** जिला – चन्द्रपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–चन्द्रा (45 कि०मी०), क्षेत्रफल – 11,654.94 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – नवम्बर से जून तक, प्रमुख वन्य जीव – पैंगोलिन, अजगर, मगरमच्छ एवं छिपकली की विभिन्न प्रजातियाँ।

मणीपुर

1. **केयबुल–लंजाओ :** जिला – इम्फाल, निकटस्त हवाई अड्डा–जूलियन (295 कि०मी०), क्षेत्रफल – 4,000 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित महीना – जनवरी से मार्च तक, वन्य जीव – हिरण की विभिन्न प्रजातियाँ तथा जंगली बिल्ली की विभिन्न प्रजातियाँ।

2. **सिनोहिएबल :** जिला – पूर्वी विष्णुपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–जूलियन, क्षेत्रफल – 4130 हेक्टेयर, वन्य प्राणी – शेर, चीता एवं पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ।

उड़ीसा

1. **उत्तरी मयूरभंज :** जिला – बारीपदा, निकटस्त हवाई अड्डा–बारीपद, क्षेत्रफल – 30,300 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – अक्टूबर से जून तक, प्रमुख वन्य जीव – हिरण की प्रजातियाँ, हाथी, शेर, भालू, हार्नबिल एवं अन्य पक्षी।

राजस्थान

1. **जैसलमेर मरूस्थल :** जिला – जैसलमेर, निकटस्त हवाई अड्डा –जैसलमेर (45 कि०मी०), क्षेत्रफल – 316,200 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – सितम्बर से फरवरी तक, वन्य जीव– चिंकारा, मरूस्थलीय लोमड़ी एवं बिल्ली, मोर, गोंडावन पक्षी इत्यादि।

2. **केवलादेव :** जिला – भरतपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–भरतपुर (8 कि०मी०), क्षेत्रफल – 2873 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – सितम्बर से फरवरी तक, प्रमुख वन्य जीव – पक्षियों की सैंकड़ों प्रजातियाँ, बड़ी संख्या में अप्रवासी पक्षी, इसके अतिरिक्त सरीसृप की कुछ प्रजातियाँ।

3. **रणथम्भौर :**जिला – सवाई माधोपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–सवाई माधोपुर (14 कि०मी०), क्षेत्रफल – 39200 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – अक्टूबर से अप्रैल तक, प्रमुख वन्य जीव –शेर, चीता, भालू, चिंकारा, मोर, स्पूनबिल इत्यादि।

4. **सरिस्का :** जिला – अलवर, निकटस्त हवाई अड्डा–अलवर (36 कि०मी०), क्षेत्रफल – 27380 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – नवम्बर से जून तक, प्रमुख वन्य जीव – शेर, चीता, मोर, हिरण एवं सरीसृप की कुछ प्रजातियाँ।

तमिलनाडु

1. **ग्रिन्डे :** जिला – चेन्नई, निकटस्त हवाई अड्डा–चेन्नई (6 कि०मी०), क्षेत्रफल – 270. 57हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – पूरे वर्ष।

उत्तराखण्ड

1. **कार्बेट :** जिला – रामपुर, निकटस्त हवाई अड्डा–रामपुर (16 कि०मी०), क्षेत्रफल – 52082 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – दिसम्बर से अप्रैल तक, वन्य जीव – शेर, चीता, हाथी, मगरमच्छ, छिपकलियाँ, अजगर, मोर इत्यादि।

2. **नन्दा चमोली देवी :** जिला – देहरादून, निकटस्त हवाई अड्डा–ऋषिकेश (276 कि०मी०), क्षेत्रफल – 63033 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – अप्रैल से अक्टूबर तक, वन्य जीव – कस्तूरी मृग हिम चीता, भराल एवं अधिक ऊँचाई पर पाए जाने वाले जीव–जन्तु।

3. **फूलों की घाटी :** जिला – देहरादून, निकटस्त हवाई अड्डा–ऋषिकेश (290 कि०मी०), क्षेत्रफल – 8750 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उपयुक्त महीने – जुलाई, अगस्त, वन्य जीव – कस्तूरी मृग, हिमालयन थार एवं फूलों वाले अनगिनत पौधे।

पश्चिम बंगाल

1. **सुन्दर वन :** जिला – दमदम, निकटस्त हवाई अड्डा–दमदम (106 कि०मी०), क्षेत्रफल – 258477 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वाधिक अनुकूल समय – दिसम्बर से फरवरी का महीना, वन्य जीव – बाघ, मगरमच्छ एवं कछुए का लगभग दस प्रजातियाँ।

वन्य प्राणी अभयारण्य

अण्डमान–निकोबार

1. **बैरन–आइलैंड :** जिला – अण्डमान, निकटस्त हवाई अड्डा–पोर्ट ब्लेयर (200 कि०मी०), क्षेत्रफल – 810 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – जनवरी से मई तक, वन्य जीव – डॉलफिन, डुगौंग, मगरमच्छ इत्यादि।

2. **क्रौकोडाईल :** जिला – अण्डमान, निकटस्त हवाई अड्डा–पोर्ट ब्लेयर (25 कि०मी०), क्षेत्रफल – 10,200 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – जनवरी से मई तक, वन्य जीव – खारे पानी का मगरमच्छ, ऑलिव रिड़ले तथा हॉक बिल कछुआ, वाटर–मॉनिटर, समुद्री चील एवं जंगली कबूतर।

3. **नरकोन्डम आईलैंड :** जिला – अण्डमान, निकटस्त हवाई अड्डा–पोर्ट ब्लेयर (200 कि०मी०), क्षेत्रफल – 681 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – नवम्बर से अप्रैल तक।

4. **उत्तरी रीफ आईलैंड :** जिला – अण्डमान, निकटस्त हवाई अड्डा–पोर्ट ब्लेयर (150 कि०मी०), क्षेत्रफल – 348 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – नवम्बर से मई तक, वन्य जीव – पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ।

आन्ध्र प्रदेश

1. **कांगो पूर्वी गोदावरी :** जिला – विशाखापट्टनम, निकटस्त हवाई अड्डा–काकीनाड़ा (16 कि०मी०), क्षेत्रफल – 23,570 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम महीने – नवम्बर से मार्च तक, वन्य जीव – स्तन पोषी एवं सरीसृप की प्रजातियाँ।

2. **एलुइना – वारंगल ग्राम :** जिला – वारंगल, निकटस्त हवाई अड्डा– हैदराबाद (230 कि०मी०), क्षेत्रफल – 81,259 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – मार्च से मई तक, वन्य जीव – बाघ, चीता, भालू, हिरण, चिंकारा, घड़ियाल, मगरमच्छ इत्यादि।

3. **कोल्लेरू गोदावरी :** जिला – गन्नवरम्, निकटतम हवाई अड्डा–एल्लरू (80 कि०मी०), क्षेत्रफल – 90,100 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – अक्टूबर से फरवरी तक।

4. **मंजीरा मेड़क :** जिला – हैदराबाद, निकटतम हवाई अड्डा–रामचन्द्रपुरम (20 कि०मी०), क्षेत्रफल – 2000 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय– नवम्बर से फरवरी तक, वन्य जीव – घड़ियाल तथा कछुए के विभिन्न प्रजातियाँ।

5. **नागराज–सागर नगर :** जिला – हैदराबाद, निकटतम हवाई अड्डा– हैदराबाद (150 कि०मी०), क्षेत्रफल – 35689 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वाधिक अनुकूल समय – अक्टूबर से जून तक, प्रमुख वन्य जीव – भेड़िया, बाघ, चीता, चिंकारा, चीतल, हिरण, कछुए, मगरमच्छ, अजगर इत्यादि।

6. **नीला–नेल्लोर पट्टु :** जिला – नेल्लोर, निकटतम हवाई अड्डा–चेन्नई (50 कि०मी०), क्षेत्रफल – 453 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – नवम्बर से मार्च तक।

7. **श्रीवरम् अदीलाबाद :** जिला – हैदराबाद, निकटतम हवाई अड्डा–करीमनगर (300 कि०मी०), क्षेत्रफल – 2991.68 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय– नवम्बर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – बाघ, चीता, भालू, हिरण इत्यादि।

अरूणाचल

1. **पूर्वी स्लांग :** जिला – लीलाबाड़ी, क्षेत्रफल – 19,000 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – नवम्बर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – हाथी, हिरण, बाघ तथा जंगली भैंस।

2. **महाओ ड़िबांग :** जिला – चाबुआ, निकटतम हवाई अड्डा–तिनसुकिया (120 कि०मी०), क्षेत्रफल – 28150 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम महीने – नवम्बर से फरवरी तक, वन्य जीव – चीता, कस्तूरी मृग, अजगर, हार्नबिल इत्यादि।

3. **पाखुल पूर्वी :** जिला – रेंगापाड़ा, निकटतम हवाई अड्डा–तेजपुर (62 कि०मी०), क्षेत्रफल – 86195 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – दिसम्बर से मार्च तक, वन्य जीव – हाथी, बाघ, चीता, भालू, हार्नबिल इत्यादि।

असम

1. **बरांडी नवगाँव :** जिला – गोहाटी, निकटतम हवाई अड्डा–गोहाटी (70 कि०मी०), क्षेत्रफल – 7014 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – नवम्बर से अप्रैल तक, प्रमुख वन्य जीव – बाघ, गैंडा, जंगली भैंस, अजगर इत्यादि।

2. **लाओखोवा :** जिला – नौगाँव, निकटस्त हवाई अड्डा–नौगाँव (20 कि०मी०), पर्यटन के लिए अनुकूल समय – नवम्बर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – गैंडा, बाघ, जंगली सुअर इत्यादि।

3. **मानस–किकराझाड़ :** जिला – बारपेटा, निकटतम हवाई अड्डा– बारपेटा, क्षेत्रफल – 39,100 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – नवम्बर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – बाघ, चीता, हाथी, लंगूर की प्रजातियाँ, भालू, गैंडा, हिरण, अजगर, मगरमच्छ इत्यादि।

बिहार

1. **भीमबांध :** जिला – मुंगेर, निकटतम हवाई अड्डा–पटना (250 कि०मी०), क्षेत्रफल – 68190 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल महीने – नवम्बर से फरवरी तक, प्रमुख वन्य जीव – चीता, भालू, भेड़िया, नीलगाय, अजगर, घड़ियाल, हॉर्नबिल इत्यादि।

2. **दलमा :** जिला – सिंहभूम, निकटतम हवाई अड्डा–जमशेदपुर (20 कि०मी०), क्षेत्रफल – 19322 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – जनवरी से जुलाई तक, प्रमुख वन्य जीव – भेड़िया, हाथी, हिरण, भालू इत्यादि।

गोवा

1. **भगवान :** जिला – डबोलिन, निकटतम हवाई अड्डा–डबोलिन (80 कि०मी०), क्षेत्रफल – 25552 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – अक्टूबर से मार्च तक, प्रमुख वन्य जीव – चीता, हाथी, भालू, अजगर इत्यादि।

2. **बोन्धा :** जिला – मडगाँव, निकटतम हवाई अड्डा–डबोलिन, क्षेत्रफल – 800 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – सितम्बर से फरवरी तक, प्रमुख वन्य जीव – चीता एवं अजगर।

गुजरात

1. **धोरांगधारा :** जिला – मेहसाणा, निकटतम हवाई अड्डा–राजकोट (140 कि०मी०), क्षेत्रफल – 484090 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – जनवरी से जून तक, प्रमुख वन्य जीव – नीलगाय, चीतल, मरूस्थलीय बिल्ली इत्यादि।

2. **गिर :** जिला – कसोड़, निकटतम हवाई अड्डा–कसोड़ (80 कि०मी०), क्षेत्रफल – 105265 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – दिसम्बर से अप्रैल तक, प्रमुख वन्य जीव – शेर, चीता एवं अजगर।

3. **खिजा :** जिला – जामनगर, निकटतम हवाई अड्डा–जामनगर (23 कि०मी०), क्षेत्रफल – 604.96 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – नवम्बर से जनवरी तक।

4. **नारायण सरोवर :** जिला – भुज, निकटतम हवाई अड्डा–भुज (110 कि०मी०), क्षेत्रफल – 30,754 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – अक्टूबर से जनवरी तक, वन्य जीव – चिंकारा, मरूस्थलीय बिल्ली, गोंडवाना पक्षी, मोर इत्यादि।

5. **नाल सरोवर :** जिला – अहमदाबाद, निकटतम हवाई अड्डा–अहमदाबाद, क्षेत्रफल – 12,082 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए सर्वोत्तम समय – नवम्बर से फरवरी तक।

6. **रतन पंचममहल :** जिला – बड़ोदरा, निकटतम हवाई अड्डा–बड़ोदरा (175 कि०मी०), क्षेत्रफल – 5565 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित मौसम – अक्टूबर से जनवरी तक, प्रमुख वन्य प्राणी – चिंकारा, भालू, मोर, गोंड़वाण इत्यादि।

हरियाणा

1. **सुलतान :** जिला – गुड़गाँव, निकटतम हवाई अड्डा–पालम (35 कि०मी०), क्षेत्रफल – 11737 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – दिसम्बर से फरवरी तक, वन्य प्राणी – पक्षियों की विभिन्न प्रजातियाँ।

हिमाचल प्रदेश

1. **बदनी मंडी :** जिला – भुनटार, निकटतम हवाई अड्डा–जोगिन्दर नगर, क्षेत्रफल – 3130 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – अप्रैल से जून तथा सितम्बर से दिसम्बर तक, प्रमुख वन्य जीव – चीता, चील तथा कई अन्य पक्षी प्रजातियाँ।

2. **दारोध :** जिला – शिमला, निकटतम हवाई अड्डा–चंडीगढ़ (200 कि०मी०), क्षेत्रफल – 16740 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – मार्च से जुलाई तथा सितम्बर से दिसम्बर तक, प्रमुख वन्य जीव – कस्तूरी मृग एवं पक्षियों की अनेक प्रजातियाँ।

3. **डोरियांग सोलनहाट :** जिला – शिमला, निकटतम हवाई अड्डा–चंडीगढ़, क्षेत्रफल – 4432 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए उचित समय – पूरे वर्ष भर।

4. **कालाटोप चम्बा :** जिला – पठानकोट, निकटतम हवाई अड्डा–पठानकोट (80 कि०मी०), क्षेत्रफल – 4728 हेक्टेयर, पर्यटन के लिए अनुकूल समय – मई, जून, सितम्बर, अक्टूबर एवं नवम्बर महीने।

पर्वतीय पारिस्थितिकी पर पर्यटन का प्रभाव

अपने स्वार्गिक सौंदर्य एवं अनछुई छटा के कारण पर्वत हमेशा से ही मनुष्य को आकर्षित किए हुए हैं। भारत की सभ्यता एवं संस्कृति से पर्वत और पर्वत श्रृंखलाओं को अलग करना असम्भव है। उत्तर भारत की सभ्यता में जहाँ हिमालय का अतुलनीय योगदान रहा है वही दक्षिण भारतीय सभ्यता को नीलगिरि से अलग करके नहीं देखा जा सकता हैं। पर्वत का नाम आते ही हमारे मानस पटल पर हरे भरे वृक्ष, फलों से लदी लताएँ, कलकलाते झरने, सुवासित वायु, चहकते पक्षी एवं स्वच्छन्द हो विचरण करते हुए जीव जन्तुओं की तस्वीरें आने लगती हैं। निश्चित तौर पर ऐसे सारे अवयव पर्यटन एवं सैर–सपाटे के लिए उचित होता है। हिन्दू मान्यताओं एवं कथाओं में भी पर्वत एवं पर्वत प्रदेश को ईश्वर का निवास कहा गया है। हिवन्त पुराण में भगवान विष्णु के वारह अवतार तथा प्रलय का उल्लेख किया गया हैं। प्रलय के समय जब पूरी पृथ्वी जलमग्न हो गई थी तब भगवान विष्णु ने वारह अवतार में प्रकट होकर ही ब्रह्माण्ड की रक्षा की थी। उस समय जो स्थान सबसे पहले पानी के ऊपर आया वह था हिमालय का देव प्रयाग। इस प्रकार से श्रृष्टि का निर्माण पर्वत पर अर्थात हिमालय पर ही हुआ। इसी महत्ता के कारण पर्वत हमेशा से ही मनुष्यों के निर्बाध आगमन का गवाह रहा है। कभी तो तीर्थ के नाम पर, कभी सैर सपाटे और पर्यटन के नाम पर तो कभी खोज एवं अध्ययन के नाम पर लोग पर्वत पर जाते रहे हैं। सच पूछिए तो विभिन्न काल में पर्वतों के प्रति लोगों के रवैये में भी काफी परिवर्तन होता आया है।

प्राचीन भारत में पर्यटन

प्राचीन काल में पर्वत विशेषतः हिमालय पर्वत का काफी धार्मिक महत्त्व रहा है और यह भू–भाग ईश्वर के निवास के रूप में जाना जाता रहा है। उदाहरण के लिए कैलाश पर्वत भगवान शिव का निवास स्थान रहा है। यह पर्वत शिव महिमा के समान ही भक्तों के ह्यदय पर शासन करता हैं। इसी प्रकार विष्णु पुराण में बद्रीनाथ पर्वत क्षेत्र का विशेष उल्लेख आता है। कहा जाता है कि धर्म के दो पुत्र नर एवं नारायण हिमालय के गंधमादन क्षेत्र को अपने धर्म प्रचार के लिए चुना था। यही क्षेत्र आज का बद्रीनाथ है। एक अन्य मान्यता के अनुसार मनु सर्वप्रथम हिमालय के मनाली क्षेत्र में आए और इसके पश्चात ही उन्होनें जगत की सृष्टि की। पर्व से जुड़े एक अन्य किंवदन्ती के अनुसार भगवान विष्णु एक बार स्वर्ग के निवासियों के भोग विलास से काफी विक्षुब्द हो गए। अतः उन्होने बैकुंठ से कुछ दिनों के लिए दूर जा कर बसने का निर्णय लिया। इस प्रवास के लिए उन्होने हिमालय के ही अलकनंदा क्षेत्र को चुना जहाँ उन्होने अपनी पत्नी देवी लक्ष्मी के साथ कुछ समय बिताए। एक अन्य प्रचलित कथा के अनुसार जब भगवान राम वनवास के पश्चात अयोध्या

पहुँचे तो वहाँ कुछ समय व्यतीत करने के बाद हिमालय की ओर गए जहाँ उन्होनें तपस्या की। लंका युद्ध में अपने हाथों रावण को मारे जाने को उन्होनें ब्रह्म हत्या माना तथा उस पाप से उद्धार के लिए उन्होनें हिमालय की श्रृंखलाओं को ही प्रायश्चित के लिए चुना। इस प्रकार यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि देवी देवताओं को भी पर्वत हमेशा ही अनुकूल लगा। दुर्गा माता ने भी एकान्तवास के लिए हिमालय को ही चुना तथा वह क्षेत्र आज वैष्णो देवी के नाम से जाना जाता है। चूँकि पर्वतीय क्षेत्र देवताओं का लीलास्थली रहा है अतः उन्हीं क्षेत्रों में महान तपस्वियों तथा ऋषि मुनियों का होना स्वाभाविक ही है। हिमाचल का कुल्लू घाटी ऐसा ही पवित्र स्थल है जहाँ वेद व्यास, वशिष्ठ, गौतम पराशर, भृगु तथा मनु सरीखे ऋषि हुआ करते थे। वस्तुतः पर्वतों का सांस्कृतिक एवं सामाजिक महत्ता का पूर्ण विवरण यहाँ सम्भव नही है परन्तु उपर्युक्त विवरण से पाठकों को इस बिन्दु का कुछ आभास अवश्य हो गया होगा। पर्वतों का यही सांस्कृतिक तथा धार्मिक पहलू इसे पर्यटन एवं देशाटन के लिए अति उपर्युक्त क्षेत्र बनाता है। प्राचीन काल में पर्वतीय क्षेत्रों में जाने वाले लोगों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम थी। ज्यादत्तर लोग आत्मशुद्धि के लिए तथा धार्मिक भावनाओं से ही इन प्रदेशों में जाया करते थे। सीमित संख्या एवं मन में धार्मिक भावनाओं के होने के कारण प्राचीन काल के तीर्थयात्रियों से पर्यटन को कोई विशेष नुकसान नही होता था। उस समय के यात्रियों के लिए प्रकृति का हर एक धटक पूजनीय तथा देवतुल्य ही था। अतः उनको नष्ट पहुँचाने अथवा प्रदूषित करने की कोई कल्पना भी नही कर सकता था। ज्ञातव्य हो कि उस समय पर्वतों पर कोई भी मौज–मस्ती अथवा आराम के उद्देश्य से नही जाता था।

मध्ययुग में पर्वत

मध्ययुगीन भारत के प्रारम्भ से ही बाहरी तथा विदेशी लोगों का हस्तक्षेप हिमालय पर्वत पर होना शुरू हुआ। तुर्क, अफगान,एवं मुगलों के आक्रमण से पर्वत की शांति भंग हुई तथा यहाँ के नैसर्गिक सौंदर्य पर भी इसका दुष्प्रभाव पड़ना शुरू हुआ। तुगलक ऐसा पहला मुस्लिम आक्रामक था जिसनें नीचलें हिमालय पर अपना कब्जा जमाया और इसके परिणामस्वरूप पर्वतीय क्षेत्रों के आबादी में संरचनात्मक परिवर्तन होने लगा। इसके पश्चात मुगलों नें भी श्रीनगर को ग्रीष्मकालीन ऐशगाह के रूप में उपयोग करना शुरू किया। इससे श्रीनगर एवं आस पास की स्थिति में काफी परिवर्तन होने लगा। इसी प्रकार उत्तर भारत के ऐसे राजपूत राजा जो पठान एवं मुगलों के आक्रमण को झेल नहीं सके वे भी भाग कर हिमालय के उन हिस्सों में बसना शुरू कर दिए जहाँ आज हिमाचल प्रदेश हैं। इस प्रकार भारत में होने वाले सामाजिक एवं राजनैतिक घटना क्रम का प्रभाव पर्वतों विशेषतः हिमालय पर पड़ने लगा। इस प्रकार एक प्रकार से कभी खत्म नहीं होने वाला मानवीय हस्तक्षेप का शिकार हिमालय के सभी क्षेत्र होने लगे। इस प्रकार पर्वत के स्थानीय

निवासियों के साथ–साथ बाहर से आए विभिन्न जातियों एवं वर्गो के लोगों ने पर्वतीय जनसंख्या में गुणत्मक परिवर्तण लाना शुरू कर दिये। पर्वत के मूल निवासियों का प्रकृति के साथ एक अति सुखद सामन्जस्य स्थापित था। फलतः मूल वासियों के किसी कार्य कलाप से हिमालय के पारिस्थिती पर कोई दुष्प्रभाव नही पड़ता था। परन्तु स्वाभाविक मनोविज्ञान के कारण बाहर से आए लोगों के दिल में पर्वत के प्रति वह सम्मान नही था। वस्तुतः बाहरी लोगों के नजर में पर्वत की उपयोगिता ज्यादा महत्त्वपूर्ण था। सच पूछिए तो उत्तर भारत के विभिन्न हिस्सों से हिमालय के क्षेत्रों में लोगों के आने के पीछे मुख्य उद्देश्य पर्वत का उपयोग करना ही था। इस प्रकार मध्ययुगीन भारत में होने वाले परिवर्त्तनों से पर्वतों के प्रति एक उपनिवेशवादी विचारधारा का जन्म हुआ। अतः लोगों में पर्वतों से अधिक से अधिक उपयोगी वस्तुओं के लेने की होड़ सी लग गई। इस प्रकार पर्वतों के पारिस्थितिक तन्त्र का बिगड़ना शुरू हो गया।

ब्रिटिश शासन में पर्वत

मध्ययुगीन भारत में हिमालय तथा अन्य पर्वतों पर शुरू होने वाला मानवीय छेड़–छाड़ ब्रिटिश शासन के दौरान परवान चढ़ने लगा। उन्नीसवीं शताब्दी में ब्रिटिश साम्राज्य के फैलाव से पर्वतीय क्षेत्रों में ऐसे अन्य समुदाय के लोग अर्थात यूरोपीय लोगों का घुसपैठ प्रारम्भ होने लगी। भारत में ब्रिटिश के आने से औद्योगिक क्रांति भी धीरे–धीरे शुरू हुई तथा इसका भी प्रभाव पर्वतों पर पड़ने लगा।

यूरोपीय लोग अपेक्षाकृत ठंडे देशों से आए थे। अतः गर्मी के मौसम में अधिक तापमान उन्हें असहनीय लगने लगा। हिमालय तथा अन्य पर्वतीय क्षेत्रों की सर्द जलवायु उनके लिए अधिक अनुकूल थी। इसलिए विशेषतः गर्मियों में सम्पूर्ण ब्रिटिशों ने पर्वतों पर अपने अस्थायी निवास बनाने शुरू कर दिए। इस प्रकार ग्रीष्म कालीन आवास तथा ग्रीष्म राजधानी जैसी परम्पराओं का उदय हुआ। उन्नीसवीं शताब्दी में औद्योगीकरण की भी एक लहर चल उठी और चूँकि इस दिशा में यूरोपीय देश अग्रणी थे अतः उन्हें इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव का भी अनुभव पहले हुआ। प्रदूषण एवं उसका स्वास्थ्य पर पड़ने वाला खतरा विदेशियों के लिए चिन्तनीय विषय था और वे लोग स्वच्छ वायु, स्वच्छ जल एवं प्राकृतिक सौंदर्य एवं हरियाली से परिपूर्ण स्थानों के प्रति आकर्षित होने लगे। निश्चित तौर पर इन सभी सुख–सुविधाओं का अकूत भंडार हिमालय क्षेत्र में था। अतः लोगों का पर्वतों की तरफ आकृष्ट होना स्वाभाविक ही था। भारत के अधिकांश भागों में अधिक तापमान के कारण पाचन सम्बन्धी बीमारियों का होना स्वाभाविक बात है। विदेशी मूल के लोगों को अधिक तापमान सहन करने की क्षमता नहीं थी, अतः उन लोगों को स्थानीय बीमारियाँ अधिक प्रभावित करने लगी। इस कारण से भी ब्रिटिशों का

पहाड़ी क्षेत्रों की तरफ अस्थाई तौर पर बसना स्वाभाविक था। हिमालय क्षेत्रों में ब्रिटिशों की बढ़ती गतिविधियों के पीछे सुरक्षा सम्बन्धी कारण भी काफी महत्त्वपूर्ण रहे हैं। उत्तरी सीमा पर अफगान एवं रूस की उपस्थिति तथा उत्तर पश्चिम में गोरखा समुदाय का जमाव उनके लिए खतरनाक हो सकता था। इसके प्रतिरोध में उन्होनें हिमालय के ऊँचे स्थानों पर सैनिक छावनी बनानी शुरू कीया जिसका सामरिक दृष्टि से काफी अधिक महत्त्व था। ऊँचाई पर स्थित सैनिक ठिकानों से अपेक्षाकृत दूर–दूर तक नजर रखना सम्भव था। इस सभी कारणों से परे ब्रिटिश नागरिक स्वभाव से ही रंगीले तथा साहसिक हुआ करते थे। अतः उनके लिए पर्वतीय क्षेत्र अपेक्षाकृत अधिक अनुकूल था। इस प्रकार विभिन्न कारणों से विदेशी मूल के लोग विशेषतः ब्रिटिश निवासी काफी बड़ी संख्या में पहाड़ी क्षेत्रों में आने लगे। ऐसा नही था कि पर्वत पर सिर्फ विदेशियों का ही जमावड़ा हुआ। सम्पन्नता एवं सत्ता के मद में चूर में फिरंगी अपने साथ अपनी सुख सुविधा के लिए नौकर – चाकर तथा सहयोगियों का एक पूरा समूह ही लाते थे। परिणामतः पहाड़ी क्षेत्रों में सामाजिक परिवर्तन होने लगा तथा शीघ्र ही इसका दुष्प्रभाव यहाँ के पर्यावरण पर पड़ने लगा।

इस प्रकार "हिल स्टेशन" बनाने का परम्परा शुरू हुई जिसका दूरगामी प्रभाव पर्वतीय क्षेत्र के पर्यावरण पर पड़ने लगा। सन् 1864 में सबसे पहले शिमला एक हिल स्टेशन बना तथा इसे भारत का ग्रीष्मकालीन राजधानी बनाया गया। इसके पूर्व शिमला, पटियाला राज्य के अन्तर्गत पड़ने वाला एक छोटा सुनसान ईलाका था। परन्तु ग्रीष्म कालीन राजधानी बनते ही यहाँ "विकास" का दौर प्रारम्भ हो गया। बाजार एवं दुकानें बनने लगी तथा जगह–जगह कस्बे बनने लगे। इससे न सिर्फ शिमला के भू–स्वरूप में परिवर्तन होने लगा बल्कि ठोस कचरे का भी अम्बार बढ़ने लगा। शिमला का निर्माण 25,000 व्यक्तियों के रहने के लिए किया गया था। आज उसी स्थान पर हमेशा लगभग 7 लाख लोग रहते हैं जिनमें 2 लाख लोग स्थाई तौर पर निवास करते हैं। शिमला के तब और अब के स्वरूप में क्या परिवर्तन हुआ है इसकी कल्पना सहज ही की जा सकती है। इस प्रकार सन् 1835 ई० में ईस्ट इंडिया कम्पनी ने दार्जिलिंग का अधिग्रहण किया तथा इसे बंगाल राज्य की ग्रीष्मकालीन राजधानी के रूप में विकसित किया। आज दार्जिलिंग तथा सिक्किम देशी एंव विदेशी पर्यटकों के लिए एक अति महत्वपूर्ण पर्यटन स्थल है। इस परिवर्तन का खामियाजा दार्जिलिंग के पर्यावरण को भोगना पड़ रहा है। इसी प्रकार दक्षिण भारत में नीलगिरी पर्वत को ज्ञान यूरोपियों को सत्रहवीं शताब्दी में ही हो गया था। सन् 1827 में यहाँ सैनिक छावनी की स्थापना हुई और इसके साथ ही ऊटी एवं आस–पास के क्षेत्र में परिवर्तन होना प्रारम्भ हो गया। इस प्रकार पर्वत जो कभी आध्यात्म् और आत्मशुद्धि का स्थल था, धीरे–धीरे मौज मस्ती का स्थान एवं आरामगृह के रूप में परिवर्तित होने लगा तथा इससे यहाँ के पर्यावरण में प्रतिकूल अन्तर आया।

पर्वतीय पर्यावरण

पहाड़ों के बारे में जब कभी भी चर्चा होती है तो आम आदमी के मानस पटल पर एक अति विशाल स्थिर मजबूत एवं सर्वशक्तिमान भौगोलिक संरचना का ध्यान आता है। साहित्यकारों ने भी पर्वत को शक्ति एवं विशालता का प्रतीक मानने में बढ़–चढ़ कर योगदान किया है। परन्तु पर्वत के पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी को अगर गौर से देखा जाए तो एकदम विपरीत चित्र हमारे सामने आता है। सच्चाई तो यह है कि पर्वत का पर्यावरण अति संवेदनशील होता है तथा किसी भी प्रतिकूल क्रियाकलाप का इस पर दूरगामी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। सामान्य भौतिक शास्त्र के नियमों को यदि ध्यान में रखा जाए तो यह विचार पूरी तरह से सत्यापित हो जाता है। यदि समतल भूमि से पत्थर के एक टुकड़े ही उसके स्थान से हटाया जाता है तो उस स्थान विशेष का ही जीव जन्तु तथा मिट्टी इत्यादि प्रभावित होता है। परन्तु जब उसी आकार का पत्थर पर्वतीय स्थान से हटाया जाता है तो उस स्थान के ऊपर तक का पूरा क्षेत्र प्रभावित हो जाता है। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि छोटी सी भी क्रिया पहाड़ी पर्यावरण को कई गुना ज्यादा प्रभावित कर देती है। भूगर्म शास्त्रियों के विचार से हिमालय अपेक्षाकृत ज्यादा क्रियाशील तथा कमसिन पर्वत क्षेत्र है। अतः हिमालय क्षेत्र में पर्यटन विकास की योजना बनाते समय यहाँ के भौगोलिक तथा भूगर्भीय विशेषताओं पर ज्यादा ध्यान देना चाहिए। वृहद हिमालय 5000 मीटर से 7500 मीटर तक की ऊँचाई के बीच अवस्थित है तथा यहाँ दुर्गम चढ़ाई तथा नुकूली उदग्र चाट्टानें हैं। हिमालय के इस हिस्से से गुजरने वाली नदियाँ अति जीवन्त तथा अत्यधिक बेगवान है। वृहद हिमालय के दक्षिणी दिशा में लघु हिमालय पाया जाता है, जिसकी अधिकतम ऊँचाई लगभग 2000 मीटर है। इस हिस्से का ढ़लान अपेक्षाकृत कम तथा कुल मिलाकर भौगोलिक स्थिति सुहावनी है। इस क्षेत्र में कई घाटियाँ भी पाई जाती है। वृहद एवं लघु हिमालय के संगम स्थल को मध्य पर्वत भी कहा जाता है। लघु हिमालय आज घनी आबादी वाला क्षेत्र बन चुका है तथा इसके परिणाम स्वरूप यहाँ विभिन्न प्रकार की मानवीय क्रिया कलापों की अधिकता भी देखी जा सकती है। वैज्ञानिक अध्ययन के अनुसार 5 से 20 कि० मी० चौड़ी मध्य पर्वत का क्षेत्र भूगर्भीय घटनाओं का प्रमुख केन्द्र रहा है तथा लघु हिमालय धीरे–धीरे वृहद हिमालय की ओर खिसकता जा रहा है। इस प्रकार हिमालय का सर्वाधिक संवेदनशील क्षेत्र पर्यटन का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थल बना हुआ है। लघु हिमालय वैसे भी प्राकृतिक कारणों से अनेक भूगर्भीय क्रियाओं का शिकार रहा है तथा अव्यवस्थित पर्यटन विकास से यहाँ का पर्यावरण और अधिक क्षतिग्रस्त हुआ है।

पर्यटन एवं पर्वतीय समाज

पहाड़ों पर मुख्य रूप से आदिवासी समुदाय के लोग ही निवास किया करते थे और उन लोगों का जीवन पूर्णरूप से वन पर ही निर्भर रहता था। अपना भोजन रोजमर्रा की आवश्यककताओं की वस्तुए दवा इत्यादि सभी वस्तुएं पहाड़ी समुदाय जंगलों से ही प्राप्त करते थे। कृषि पहाड़ी लोगों का मुख्य व्यवसाय कभी नही रहा है तथा जहाँ कहीं भी खेती होती थी वह विशेष पद्धति से सीढ़ीनुमा खेतों पर ही होती थी। ज्ञातव्य हो कि इस विशेष कृषि पद्धति मृदा क्षरण एवं पर्यावरण की अन्य समस्याएँ न के बराबर हुआ करती थी। खेती का बहुत कम होना और विशेष पद्धति से होना अपने आप में इस बात को स्पष्ट करता है कि मूल पर्वतीय निवासियों के दिल में वहाँ की प्राकृतिक सम्पदा के प्रति कितना स्नेह था। इस प्रकार प्राचीन काल में जब तक पहाड़ों पर स्थानीय लोगों का वर्चस्व रहा पर्वतीय पारिस्थितिकी में कोई प्रतिकूल परिवर्तन नही हुआ। परन्तु जैसे –जैसे पर्वतों पर बाहरी लोगों का आना शुरू हुआ। परिस्थिति में धीरे–धीरे परिवर्तन होना प्रारम्भ हो गया तथा आज हिमालय सहित अन्य पर्वतों की स्थिति अत्यन्त ही दयनीय हो गई है। बाहरी जनसमुदाय पर्वतों पर विभिन्न कारणों से बस तो जरूर गए परन्तु उन लोगों नें पर्वतीय पर्यावरण से अपना तारतम्य न तो बैठा पाए नही इस दिशा में कोई सार्थक प्रयास किया। पर्वतीय समाज को सबसे अधिक क्षति बाहरी लोगों की प्रवृति के कारण हुई। शरणार्थी के रूप में आए और उसके पश्चात स्थाई रूप से बसने वाले लोगों ने पर्वतीय पर्यावरण को एक ''उपभोक्ता वस्तु'' के रूप में देखना शुरू किया तथा इसके परिणामस्वरूप एक उपनिवेशवादी प्रवृति का उद्‌भव हुआ। यह उपनिवेशवादी प्रवृति ब्रिटिश युग में अपनी चरम सीमा पर पहुँचा और तब से आज तक इसमें कोई कमी नही देखी गई। पर्वत पर उपलब्ध प्रकृति प्रदत सभी वस्तुओं को अधिक से अधिक लूट लेने की होड़ लग गई। विशेष उल्लेखनीय बात यह है कि बाहर से आए लोग वैज्ञानिक तकनीकी तथा आर्थिक रूप से अधिक सशक्त थे अतः उन लोगों ने पहाड़ की आर्थिक व्यवस्था पर धीरे–धीरे अपना वर्चस्व कायम कर लिया। इसका एक परिणाम तो यह हुआ कि मूल पहाड़ी निवासी और घने जंगल की ओर विस्थापित होने लगें इस प्रकार अपेक्षाकृत जंगल का घना अछूत क्षेत्र भी अब मानव उपस्थिति का शिकार होने लगा। पहाड़ी समुदाय के अपेक्षाकृत सम्पन्न एवं सक्षम लोगों में अंधानुकरण की प्रवृति बढ़ी और बाहरी लोगों के द्वारा प्राकृतिक संसाधनों के दोहन को रोकने के बजाय उन लोगों ने स्वंय भी इस प्रकार के परम्परा विरोधी क्रिया–कलापों में हिस्सा लेना शुरू कर दिया। जनसंख्या में हुई गुणात्मक और संख्यात्मक वृद्वि के कारण अधिक अनाज की आवश्यकता होने लगी तथा मूल पर्वतीय व्यवसाय को छोड़कर लोग खेती करना प्रारम्भ कर दिया। इसका पहला असर यह हुआ

कि जंगल कटने लगे और खेती होने लगा। धीरे–धीरे पहाड़ पर एक कृषक वर्ग अपना छाप छोड़ने लगा। इसके बाद जब पर्यटन का प्रचलन शुरू हुआ तब आगन्तुकों की सुविधा के लिए विभिन्न वस्तुए एवं सेवाओं को उपलब्ध कराने की आवश्यकता हुई। अतः दुकान, होटलों एवं बाजार बसने शुरू हो गए। अतः व्यापारियों एवं व्यवसाइयों ने मूल निवासियों को और भी पर्दे के पीछे ढ़केल दिया। इन परिवर्तनों का एक नमूना कोई भी देख सकता है यदि वह शिमला अथवा मसूरी के जैसे किसी भी पर्यटन स्थल पर जाता है। शिमला अथवा मसूरी की भीड़ किसी प्रकार से मुम्बई के मरीन ड्राईव के मानव समूह से भिन्न नहीं दिखता है। आबादी में हुए इस गुणात्मक परिवर्तन का प्रभाव अब पहाड़ों के सौहार्दपूर्ण वातावरण पर भी पड़ना प्रारम्भ हो गया है। प्रमुख पर्यटन स्थल शिमला एवं मसूरी के मल जनसंख्या से लगभग चार से पाँच गुणा अधिक पर्यटक प्रतिवर्ष गर्मियों में यहाँ आया करते हैं। इसके परिणामस्वरूप पर्यटन मौसम में यहाँ पीने लायक स्वच्छ पानी की कमी हो जाया करती है। अधिक माँग के कारण विद्युत आपूर्ति भी बाधित होने लगा है। ऐसी अवस्था में प्रशासन भी होटलों एवं रेस्ट हाऊस को प्राथमिकता के आधार पर विद्युत आपूर्ति किया करते हैं और वहाँ के मूल निवासियों को अँधेरे का सामना करना पड़ सकता है। ऐसी प्रतिकूल अवस्था में सामाजिक असंतुलन का बढ़ना अन्ततः आपसी विरोध को जन्म देगा। पर्यटन के त्वरित विकास से कानून व्यवस्था की भी समस्या बढ़ती जा रही है। नशीले पदार्थ की बिक्री तथा वेश्यावृत्ति जैसी बुराईयों को बढ़ावा मिल रहा है और इससे सामाजिक अवस्था बिगड़ती जा रही है।

परिवर्तित सामाजिक स्वरूप का एक अन्य दूरगामी प्रभाव पहाड़ों के पर्यावरण पर पड़ता हैं इस दिशा में जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्रो० पी० एस० रामकृष्णन के द्वारा किया गया अध्ययन अति महत्वपूर्ण है। प्रो० रामकृष्णन ने अपने रिपोर्ट में कहा है कि पर्वतीय क्षेत्र के पर्यावरण को सुरक्षित एवं संरक्षित रखने में वहाँ की मूल जनजातिए समुदाय का योगदान अतुलनीय होता है। अतः मूल निवासियों की प्रतिशत कमी का स्पष्ट प्रभाव वहाँ के पर्वतों पर देखा जा सकता है। प्रस्तुत अध्ययन मेघालय के चेरापूँजी जिले में किया गया और पाया गया कि बाहरी लोगों के काफी अधिक संख्या में बसने के परिणाम स्वरूप यहाँ की वनस्पतियों एवं अन्य पर्यावरणीय घटकों पर काफी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। अध्ययन के दौरान पाया गया कि इस क्षेत्र का कुछ हिस्सा अभी भी जैवविविधता के दृष्टिकोण से काफी धनी है, यद्यपि ऐसे स्थानों का क्षेत्रफल नगण्य है। माउसमाई क्षेत्र में ऐसे जैवविविधता से परिपूर्ण स्थानों को "लकिंगटांग" कहा जाता है। खासी जनजातीय भाषा में "लकिंगटांग" उन स्थानों को कहा जाता है जहाँ पर प्राचीन आत्माएँ निवास करती हैं।

धार्मिक ओर परम्परागत भावनाओं के कारण स्थानीय खासी समुदाय इन स्थानों को सुरक्षित रखते हैं तथा यहाँ किसी भी प्रकार के कार्यकलापों को होने से रोकते हैं। परिणामस्वरूप ऐसे स्थान आज भी जंगल के प्राचीन स्वरूप को अक्षुण्य रखे हुए है तथा यहाँ जैवविविधता आज भी स्वस्थ्य रूप में पाई जाती है। निश्चित तौर पर यह लाभ स्थानीय समुदाय के रहने एवं उनके द्वारा सदियों से चली आ रही परम्पराओं का निर्वाह करने के कारण ही सम्भव हुआ है। ठीक इसका विपरीत प्रभाव आगन्तुक समुदाय के बसने एवं स्थानीय जनसंख्या के कम होन से पड़ता है। विस्तृत अध्ययन से भारत के अन्य स्थानों पर भी ऐसे छोटे परन्तु सुखद उदाहरण पेश करने वाले भूखंड पाए गए हैं। उत्तर प्रदेश के चमोली जिले में भी ऐसे "पवित्र–भूखंड" पाए जाते हैं जिसे "हरियाल" के नाम से जाना जाता है। सिक्किम के देमजोंग क्षेत्र में बसे भूटिया जनजाति के लोग भी धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर वन के छोटे खंड को अभी तक सफलता पूर्वक सुरक्षित रखे हुए है। केरल प्रदेश में भी ऐसे उदाहरण आसानी से देखे जा सकते हैं।

इन उदाहरणों से स्पष्ट होता है कि पर्वतीय पर्यावरण के प्रति जो संवेदनशीलता स्थानयी लोगों में पाई जाती है वह कदाचित बाहर से आकर बसे लोगों में मिलना मुश्किल है। फलस्वरूप पर्वतों पर हो रहे सामाजिक परिवर्तन का प्रभाव वहाँ के पर्यावरण पर भी स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

पर्यटन एवं भूमिस्वरूप

पर्यटन विकास का सर्वाधिक स्पष्ट परिणाम पहाड़ो के भूमि स्वरूप में परिवर्तन के रूप में हमारे सामने आता है। हिमालय क्षेत्र इसका एक जीवन्त उदाहरण है। आज से लगभग तीन दशक पूर्व हिमालय क्षेत्र का 60 प्रतिशत भू–भाग घने जंगल से ढका हुआ था। सुदूर संवेदन के द्वारा आँकड़ों के अनुसार आज जंगल सिमटकर मात्र 12 प्रतिशत रह गया है। जो भी वन क्षेत्र बचा हुआ है उसका आच्छादन घनत्व भी काफी कम हो चुका है। हिमालय पर प्राकृतिक रूप से पाए जाने वाले जल–स्त्रोतों में 48 प्रतिशत सूख चुके हैं। कुल मिलाकर स्थिति काफी दयनीय है और पहाड़ों की इस स्थिति में बेतरतीब बढ़ते पर्यटन का काफी हाथ रहा है। पर्यटन विकास के लिए कुछ मूलभूत संरचनाओं का निर्माण करना अति आवश्यक होता है तथा उसके लिए काफी बड़े भू–भाग की आवश्यकता होती है। जाहिर है, इसके लिए वन क्षेत्रों की सफाई की जाती है। होटलों एवं अन्य आश्रय स्थलों के निर्माण के लिए, मनोरंजन स्थलों जैसे गोल्फ मैदान, पोलो मैदान, चिड़िया घर, तरण ताल एवं क्लबों के निर्माण के लिए काफी बड़ी मात्रा में भूखंड की आवश्यकता होती है और इन सभी आवश्यकताओं की बंदी पर जंगल ही कुर्बान होता है। इन सबके अतिरिक्त पक्की सड़कों

का निर्माण भी भू स्वरूप को बदलने एवं पर्यावरण को प्रतिकूल बनाने में काफी सहायक सिद्ध होता है। पर्यटन विकास के लिए विशेषज्ञों ने सड़क निर्माण को सबसे महत्वपूर्ण कदम के रूप में प्रस्तुत किया है। पर्यटक अपने चुने गए गन्तव्य स्थान पर कम समय में सुविधापूर्वक पहुँचना चाहता है। इसके लिए उचित सड़क का होना अति आवश्यक है। बद्रीनाथ एंव केदारनाथ जैसे क्षेत्रों में सड़क निर्माण के पश्चात पर्यटन में कई गुणा वृद्धि हुई है। परन्तु सड़क विस्तार का दूसरा पक्ष काफी चिन्तनीय होता है। सुचारू यातायात के लिए एक बार पुनः जंगलों को काटना अनिवार्य हो जाता है तथा इसके पश्चात भी सड़क निर्माण की प्रक्रिया काफी विनाशकारी साबित होता है। एक अध्ययन के अनुसार एक कि०मी० सड़क बनाने में लगभग 40,000 से 80,000 घन मीटर ठोस कचरा बनता है। हिमालय क्षेत्र में पर्यटन एवं अन्य कारणों से लगभग 45,000 कि०मी० सड़क का निर्माण किया गया है। इस प्रकार सम्पूर्ण उत्पन्न कचरा लगभग 2,6500 लाख घन मीटर के करीब आंका गया है। एक सर्वेक्षण के अनुसार अरूणाचल प्रदेश में 691 घन मीटर प्रति कि०मी० प्रति वर्ष, कुमाऊँ क्षेत्र में 411 घन मीटर प्रति कि०मी० प्रति वर्ष तथा डार्जिलिंग में 724 घन मीटर प्रति कि०मी० प्रति वर्ष ठोस कचरा सिर्फ सड़कों के मरम्मत के दौरान पैदा होता है। स्पष्ट है कि इतनी बड़ी मात्रा में उत्पन्न कचरे का सही प्रकार से विस्थापन एक दुष्कर कार्य है और अक्सर कचरे को बेतरतीब प्रकार से ढलान पर फेंक दिया जाता है। इससे वनस्पतियों, जलाशयों एवं स्थलीय जीवमंडल को काफी क्षति पहुँचती है। जल स्त्रोतों एवं नदियों के रास्ते में ठोस कचरे के जमाव से जल बहाव के रास्ते में परिवर्तन आ जाता है और इसके परिणामस्वरूप अचानक आने वाले बाढ़ की घटनाओं में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। ऐसी आपदाओं से प्रतिवर्ष जान–माल की काफी क्षति होती है और इसके लिए निश्चित तौर पर अदूरदर्शी पर्यटन विकास जिम्मेदार है। वनों की निरन्तर होती जा रही कटाई तथा भूमि स्वरूप में होने वाले प्रतिकूल परिवर्तन का प्रभाव अन्य क्षेत्रों में भी देखा जा सकता है। पहाड़ी सतह वृक्ष विहीन होने के कारण वर्षा का पानी तेजी से बह कर नीचे चला जाता है और भूमि के भीतर पानी के धीरे–धीरे रिसने की प्रक्रिया में काफी कमी आती जा रही है। इसके परिणाम स्वरूप हिमालय क्षेत्र में भी भूगर्भीय जल–भंडार तेजी से घटता जा रहा है तथा गर्मियों के मौसम में शिमला, नैनीताल, मसूरी आदि पर्यटन स्थलों पर पेयजल की अभाव होने लगा है। यह स्थिति स्वयं पर्यटन उद्योग के लिए भी चिन्तनीय है। नैनीताल के गौला नदी को जल प्रदान करने वाले करीब 45 जल स्त्रोत अब या तो सूख गए हैं अथवा वह मौसमी हो गया है। इससे गौला दनी के जल भंडार में काफी कमी आ गई है तथा इसका दुष्प्रभाव यहाँ के मूल निवासियों के साथ–साथ पर्यटकों को भी झेलना पड़ रहा है। इस दिशा में यदि समय रहते प्रयास नहीं किया गया तो पर्यटन के लिए मशहूर हमारा हिमालय क्षेत्र शीघ्र ही जल संकट से ग्रसित हो जाएगा।

पर्वतीय जैव विविधता

भारत का हिमालय और नीलगिरी पर्वत श्रृंखला अपनी जैवविविधता के लिए विख्यात रहे हैं। यहाँ विभिन्न प्रकार के जानवर, अनेकों पक्षियाँ, छोटे जीव जन्तु एवं कीट पतंगों की विभिन्न प्रजातियों का अनूठा संग्रह पाया जाता रहा है। इसी प्रकार पौधों में नग्नबीजी वृक्षों की दुर्लभ प्रजातियाँ, लताएँ, पुष्पीय पौधे, फर्न, ऑर्किड इत्यादि की असंख्य प्रकार पर्वतों पर प्राकृतिक रूप में पाए जाते थे। परन्तु जैसे–जैसे पर्वतों पर पर्यटन सहित अन्य मानवीय कार्य कलापों में वृद्धि हुई है वैसे–वैसे जीव–जन्तुओं की उपलब्धता में काफी कमी आई है। यही स्थिति वनस्पतियों की भी है। आज वनस्पतियों एवं जीवों की अनेक प्रजातियाँ मात्र पुस्तकों के पृष्ठ पर ही उपलब्ध है। पर्यटन विकास के लिए जैव विविधता का अपना महत्व होता है। शहरी भाग–दौड़ से थका मनुष्य हमेशा ऐसे स्थान पर ही जाना पसन्द करता है जहाँ हरियाली हों, खूबसूरत पेड़–पौधे हों एवं पक्षियों तथा अन्य जीव–जन्तुओं के नैसर्गिक रहन–सहन को नजदीक से देखा जा सके। जैव विविधता की हो रही क्षति निश्चित तोर पर पर्यटन उद्योग के लिए एक खतरे का संकेत है।

कुछ पर्यटन स्थलों पर कृत्रिम जैवविविधता को स्थापित करने का प्रयास किया जा रहा है। बॉटिनिकल गार्डेन, चिड़िया घर, ऑर्किड बगान, ग्लास हाउस इत्यादि इस क्षेत्र में हो रहे अनूठे प्रयोगों के कुछ उदाहरण हैं। इन प्रयासों की सराहना की जानी चाहिए तथा इसका सुखद परिणाम भी हमारे सामने आ रहा है। परन्तु एक यक्ष प्रश्न हमारे समक्ष अभी भी खड़ा है– यदि विश्व प्रसिद्ध "फूलों की घाटी नष्ट हो जाता है तो क्या उसे पुनः बनाया जा सकता है ?" उत्तर निश्चित तौर पर नहीं होगा।

पर्वतीय पर्यटन एवं भूस्खलन

सितम्बर 1998 की एक घटना। पूजा अर्चना के बाद मानसरोवर से तीर्थयात्री वापस आ रहे थे और रास्ते में पड़ने वाले गाँवों में रात्रि विश्राम कर रहे थे। अगली सुबह ऐसे दर्जनों गाँवों का कोई अता–पता नहीं था। हजारों यात्री काल का शिकार हो चुके थे। कारण था नदी के रास्ते में परिवर्तन होने के कारण अचानक आई बाढ़ तथा उसके उपरान्त हुआ भू–स्खलन।

जुलाई, 1983 की एक अन्य घटना। अल्मोड़ा जिले का कारमी ग्राम आधे घंटे से भी कम समय में शमशान में तब्दील हो चुका था। कारण था वृक्ष विहीन पर्वत पर होने वाला बादल फटने की घटना तथा उसके पश्चात घरों पर गिरने वाला हजारों टन कचरा एवं पत्थर।

सितम्बर, 1983 में सिक्किम के मंगन ग्राम के समीप कई भूस्खलन हुए जिसके परिणाम स्वरूप लगभग 2,000 व्यक्तियों की मृत्यु हो गई, 25,000 लोग गृह विहीन हो गए तथा 10,000 पर्यटक हफ्तों तक फंसे रहें।

अगस्त, 1979 मंदाकिनी नदी की घाटी में बसे कौन्था ग्राम में घटित घटना। नदी में आई अचानक बाढ़ के कारण 10 वर्ग कि०मी० क्षेत्र जलमग्न हो गया, 39 मनुष्य मारे गए, 125 जानवर बह गए तथा 47 परिवार बेघर हो गए।

ऐसी दुर्घटनाओं की सूचि अन्तहीन है और समाचार पत्रों में ऐसी खबर एक आम बात हो गई है। अक्सर पर्वतवासी इन घटनाओं को प्राकृतिक आपदा मान कर सह लेते हैं। परन्तु गौर से इन घटनाओं का विश्लेषण करने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इनके पीछे हमारी अदूरदर्शिता एवं त्वरित विकास की लालसा में प्रकृति एवं पर्यावरण से खिलवाड़ करने की प्रवृति ही जिम्मेवार है। पर्वत आज विभिन्न मानवीय क्रिया कलापों का केन्द्र बन चुका है। पर्यटन सर्वाधिक महत्वपूर्ण क्षेत्र के रूप में उभरा है तथा इस व्यवसाय से होने वाले त्वरित लाभ की संभावनाओं ने भारी संख्या में लोगों को पर्वतीय प्रदेशों के तरफ आकर्षित किया है। बढ़ती जनसंख्या, कटते वन, भूमि क्षरण एवं निर्माण कार्यों ने पर्वतीय पारिस्थिती को काफी नुकसान पहुँचाया है और इसका दुष्परिणाम भूस्खलन के रूप में हमारे सामने प्रतिवर्ष बढ़ती जनसंख्या में आ रहा है। आर्थिक विकास अनिवार्य है, पर्यटन उद्योग भी अपरिहार्य है परन्तु इन सब से ऊपर मानव अस्तित्व का अपना महत्व है। वस्तुतः विकास की परिकल्पना मानव केन्द्रित ही रहा करती है और अक्सर इसके दूरगामी दुष्प्रभाव से स्वयं मनुष्य ही प्रभावित हो जाता है।

पारसनाथ पहाड़ी – एक अध्ययन

पारसनाथ पहाड़ी, नवगहित झारखण्ड राज्य का एक महत्वपूर्ण धार्मिक एवं पर्वतीय पर्यटन स्थल है। यह $86^0$7′ पूर्वी अक्षांश से $86^0$19′ पूर्वी अक्षांश तथा $23^0$50′ उत्तरी देशान्तर से $23^0$54′ उत्तरी देशान्तर के बीच स्थित है। पारसनाथ पहाड़ी की अधिकतम ऊँचाई 1366 मीटर है तथा यह झारखण्ड का सबसे ऊँचा स्थान है। गिरिडीह जिले में स्थित पारसनाथ ग्रैण्ड ट्रंक रोड पर डुमरी नामक स्थान से लगभग 16 कि० मी० की दूरी पर है। पारसनाथ के तलहटी पर मधुबन नाम का स्थान जैनियों का एक प्रमुख तीर्थ स्थल है। मधुबन से पारसनाथ पहाड़ी एक टोपी के सदृश दिखता है। ऐसी मान्यता है कि जैन सम्प्रदाय के चौबीसवें तीर्थकर पार्श्वनाथ स्वामी इसी स्थान पर श्रवण मास के आठवें दिन को स्वर्गारूढ़ हुए थे। जैन पुस्तकों में इस स्थान का वर्णन "संवेद शिखर" के

नाम से भी उपलब्ध है परन्तु इसका प्रचलित नाम पारसनाथ ही है। यहाँ भगवान पार्श्वनाथ का अति प्राचीन मंदिर है जहाँ उनके चरण चिह्न देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ चौबीस अन्य मंदिरे भी हैं तथा प्रत्येक मंदिर में भगवान पार्श्वनाथ के चरण चिह्न उपलब्ध है। इन मंदिरों के अतिरिक्त एक अन्य दर्शनीय स्थान सीतानाला है जो एक प्राकृतिक जल प्राप्त है। पारसनाथ पहाड़ी के शिखर पर भगवान शिव का एक अति प्राचीन मंदिर भी स्थित है जहाँ हिन्दु धर्मावलम्बी पूजा अर्चना करते हैं। इसके अतिरिक्त ऐसी भी मान्यता है कि स्थानीय आदिवासी मूल के लोगों के अधिस्थाती देवता का यहाँ पूजन स्थल है। यद्यपि, गत कई दशकों से इन स्थानों पर जाने वालों की संख्या नगण्य रही है परन्तु झारखण्ड राज्य के सृजन के पश्चात एक बार पुनः इन स्थानों के प्रति लोगों की रूचि बढ़ी है।

इस प्रकार पारसनाथ पहाड़ी अपने धार्मिक महत्व एंव प्राकृतिक सौन्दर्य दोनों के लिए झारखण्ड क्षेत्र में विख्यात रहा है और प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में पर्यटक यहाँ आते रहते हैं। जैन धर्म के श्वेताम्बर एवं दिगम्बर दोनों पंथो के मानने वाले यहाँ पूरे वर्ष आते रहते हैं परन्तु जुलाई–अगस्त माह में पर्यटकों की संख्या में काफी वृद्धि हो जाती है। पारसनाथ पहाड़ी चारो तरफ स्थित कोयला खान तथा औद्योगिक स्थलों के बीच लोगों को प्रकृति का एक सुखद दर्शन करवाने में सक्षम रहता है। पहाड़ी के दूसरे तरफ स्थित तोपचांची झील एवं अभयारण्य इस स्थल के महत्व को और बढ़ा देता है। पारसनाथ पर्यटन के लिए एक अतिमहत्वपूर्ण स्थान है तथा यहाँ के पर्यावरण पर सैलानियों के आने के प्रभाव का एक अध्ययन किया गया। इस अध्ययन से प्राप्त आँकड़े चौंकाने वाले हैं।

आज से लगभग चालीस वर्ष पूर्व पारसनाथ जाना एक कठिन कार्य था। पर्यटकों एवं तीर्थयात्रियों को लगभग 16 कि०मी० पैदल घने जंगल के बीच सफर करना पड़ता था। आज सड़क बन जाने से पर्यटकों की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है। पारसनाथ की तलहटी में अवस्थित मधुबन में आज करीब 48 धर्मशालाएँ एवं होटल बन गए हैं। सैंकड़ों की संख्या में दुकानें खुल चकी हैं। इससे पर्यटन को बढ़ावा अवश्य मिलता है परन्तु यहाँ के पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। सन् 2010 में किए गए एक सर्वेक्षण के अनुसार लगभग 23.02 लाख पर्यटक पारसनाथ आए। माह वार पर्यटकों का आना निम्न प्रकार से था :–

माह		(लाख में)
जनवरी	–	2.81
फरवरी	–	2.11
मार्च	–	1.92
अप्रैल	–	1.31
मई	–	0.91
जून	–	0.75
जुलाई	–	3.18
अगस्त	–	3.05
सितम्बर	–	1.31
अक्टूबर	–	1.51
नवम्बर	–	1.62
दिसम्बर	–	2.54

पर्यटकों के भीड़ एवं उनके द्वारा किए गए विभिन्न कार्य कलापों से इस मनोरम पहाड़ी पर बहने वाला झरना "सीता–नाला" अब बरसात के चंद महीनों को छोड़कर प्रायः सूखा ही रहता है। यहाँ की मिट्टी में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में भी अप्रत्याशित वृद्धि देखी गई है। कार्बनिक पदार्थों की अधिकता मृदा प्रदूषण को इंगित करता है।

पारसनाथ के चार ऐसे स्थान जहाँ पर्यटकों की आवाजाही काफी अधिक होती है और एक अपेक्षाकृत सुदूर स्थान की मिट्टी का नमूना लिया गया और विभिन्न मौसमों में कार्बनिक मात्रा का आकलन किया गया। प्राप्त परिणाम को नीचे दिया गया है।

स्थान	जून–सितम्बर	अक्टूबर–जनवरी	फरवरी–मई
1	26.31	24.65	14.34
2	24.68	22.59	10.31
3	30.05	26.34	10.45
4	20.68	18.34	10.61
5 *(सुदूर स्थान)*	14.34	10.34	8.40

सभी आँकड़े मि०ग्राम/100 ग्राम में

उपरोक्त परिणाम से यह स्पष्ट हो जाता है कि मंदिर क्षेत्र अथवा परिक्रमा क्षेत्र के समीप मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ अधिक पाए गए हैं।

पारसनाथ क्षेत्र के वनस्पतियों का भी सर्वेक्षण किया गया तथा पर्यटन क्षेत्र एवं सुदुर क्षेत्र की तुलना की गई। वर्तमान स्थिति की तुलना लेखक के द्वारा बीस वर्ष पूर्व किए गए सर्वेक्षण से तुलना की गई। वानस्पतिक आच्छादन आज से बीस वर्ष लगभग 42 प्रतिशत थी, जबकि आज पर्यटन क्षेत्र में मात्र 23 प्रतिशत आच्छादन पाया जाता है। सुदूर वन क्षेत्र में आज से बीस वर्ष पूर्व 12 फर्न की 26 प्रजातियाँ पाई गई थी जबकि अजा मात्र 12 प्रजातियाँ ही उपलब्ध हैं। सुदूर क्षेत्र से 22 किस्म के फर्न एकत्र किए गए।

वनस्पतियों के तुलनात्मक अध्ययन

	पर्यटन क्षेत्र 1980	पर्यटन क्षेत्र 2010	पर्यटन क्षेत्र 2010
आच्छादन प्रतिशत	42	23	38
फर्न प्रजातियाँ	26	12	22
ब्रायोफाई प्रजातियाँ	15	8	13
औषधीय पौधे (प्रजातियाँ)	36	19	32
ऑर्किड प्रजातियाँ	06	02	06

इसी प्रकार वनौषधियों, ऑर्किड तथा ब्रायोफाईट की प्रजातियों में भी चिन्ताजनक कमी आई है। इस प्रकार पारसनाथ के पर्यावरण पर पर्यटन के प्रतिकूल प्रभाव को स्पष्ट देखा जा सकता है।

पर्यटन का जलाशयों एवं अनूप स्थान पर प्रभाव

जब कभी प्राकृति अथवा कृतिम कारणों से निचले स्थानों में पानी का जमाव होता है तब वह स्थल तकनीकी तौर पर जलाशय कहा जाता है। प्रस्तुत अध्ययन में झील, तालाब, सरोवर इत्यादि को जलाशय के रूप में स्वीकार किया गया है। अनूप स्थल जिसे सामान्य तौर पर वेटलैंड के नाम से जाना जाता है, अपेक्षाकृत अधिक विवादस्पद नाम हैं क्योंकि विभिन्न विद्वानों ने इसका अलग–अलग प्रकार से वर्णन किया है। सर्वमान्य परिभाषा के अनुसार ऐसा भूभाग जहाँ 14 दिन अथवा अधिक तक पानी जमा रहे तथा मिट्टी में नमी 60 दिन अथवा अधिक हो उसे अनूप स्थल कहा जा सकता है। इस परिभाषा के अनुसार अनूप स्थल में अनेकों प्रकार के भूभाग समाहित हो जाते हैं। एक अध्ययन के अनुसार भारत में 40.6 लाख हेक्टेएर भूभाग अनूप स्थल के रूप में है, जिसमें से लगभग 15 लाख प्राकृतिक तथा 25.6 लाख कृत्रिम अनूप स्थल है। लद्दाख से कन्याकुमारी तक एवं कच्छ से अरूणाचल प्रदेश तक सम्पूर्ण भारत देश में अनेकों नयनाभिराम अनूप स्थल पाए जाते हैं। इनमें चिल्का झील,केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, यूलर झील, हरिका झील, साम्भर झील, लोकटक झील, उजनी ताल, कोल्लेरू ताल, नाल सरोवर, कबर झील, सुखना झील इत्यादि का नाम विशिष्टता से लिया जा सकता है।

पारिस्थितिक तन्त्र में अनूप स्थल का अपना विशिष्ठ स्थान होता है। सर्वप्रथम तो अनूप स्थल के अन्तर्गत कई प्रकार के भूभाग रखे जा सकते है जैसेः– झील, नदी के किनारे, मैंग्रोव प्रदेश, दलदली स्थान इत्यादी। अतः अनूप प्रदेश में जैव विविधता भी भरपूर पाई जाती है। सैंकड़ों प्रकार के पक्षी, जलचर जीव एवं जलोद्भिद विशेषतः अनूप प्रदेश में मिलते हैं। चूँकि ऐसा स्थान स्थल एवं जल के साझा विशेषताओं के साथ अपनी भी विशेषता रखता है अतः यहाँ विभिन्न प्रजातियों के पशु–पक्षी तथा पेड़–पौधों का पाया जाना स्वाभाविक ही है। अनूप स्थल प्रवासी पक्षियों का पसंदीदा शरण स्थल होता है तथा सर्दियों के मौसम में सुदूर प्रदेश से लाखों की संख्या में ऐसे पक्षी भारत आते हैं। इसके अतिरिक्त यह अन्य सरीसृप प्रजातियों का भी निवास स्थान होता है। भारत में अनूप स्थल तथा वहाँ पाए जाने वाले पौधों एवं जीवों का सांस्कृतिक महत्व आदिकाल से रहा है। कमल, हंस, कछुआ एवं मछली पौराणिक कथाएं जुड़े रहे है। कमल स्वयं भगवान विष्णु का आसन रहा है। इस परिपेक्ष्य में अनूप स्थल को ईश्वर का निवास माना जाए तो यह कथन अतिशयोक्ति नहीं होगा। इसी प्रकार हंस माता सरस्वती का वाहन है। कछुआ और मछली भी भगवान विष्णु के अवतार के रूप में सर्वमान्य रहे हैं। इस प्रकार देवी–देवता भी सम्भवतः इसको अपने निवास एवं कार्यस्थली के रूप में पसन्द करते थे। भगवान राम एवं भगवान कृष्ण ने भी क्रमशः

सरयू तथा यमुना के किनारे जलछाजन क्षेत्र को ही अपनी जन्म स्थली के रूप में चुना था। ऋषि मुनियों ने भी अनूप स्थल की महत्ता को सहर्ष स्वीकार किया है। महाकवि कालिदास के काव्यों में जलाशयों एवं अनूप स्थलों के प्राकृतिक सौन्दर्य का अतुलनीय वर्णन है। कुमार सम्भवम में तपस्यारत पार्वती जी का वर्णन ''शैवाल जाल लिप्त कमलिनी'' के रूप में किया गया है, जो कि कवि कालिदास एवं उनके समकालीन समाज में वेटलैंड एवं वहाँ के जैवविविधता के प्रति प्रेम एवं आदर को दर्शाता है। इसी प्रकार महर्षि वाल्मीकि ने प्रणयरत दो सारसों का एक बहेलिया द्वारा किए गए वध का जो मार्मिक वर्णन किया है उससे भी जलीय जैवविविधता के महत्व को रेखांकित किया जा सकता है।

जलाशय एवं अनूप एक पर्यटन स्थल

मनुष्य पर्यटन स्थल के रूप हमेशा हरे–भरे तथा स्वच्छ जल से भरे हुए स्थानों को पसन्द करता आया है। इसी कारण से झील, तालाब, झरने, नदियों के किनारे बसे शहर एवं कस्बे पर्यटन स्थल के रूप में हमेशा ही प्रचलित रहे हैं। ऐसे स्थानों पर पाए जाने खूबसूरत पेड़–पौधें एवं विभिन्न प्रकार के जीव जन्तु उस स्थान के सौन्दर्य को और भी बढ़ा देते हैं। इन सभी कारणों से जलाशयों एवं अनूप स्थलों का महत्व पर्यटन विकास में असीमित रहा है। आधुनिक युग में सप्तांहत बिता कर तथा पिकनिक का आयोजन कर के भी लोग अपनी थकान एवं एक रास्ता को दूर किया करते हैं। इस उद्देश्य के लिए भी अनूप स्थल एवं जलाशयों का ही चुनाव किया जाता है। पश्चिमी देशों के साथ–साथ आजकल हमारे देश में भी जल–क्रीड़ा का प्रचलन बढ़ रहा है। जल–क्रीड़ा साहसिक पर्यटन का एक विशिष्ट अंग बन चुका है। इस उद्देश्य के लिए भी जलाश्यों का उपयोग पर्यटन के द्वारा किया जा रहा इस प्रकार देखा जाता है कि अपने बहुद्देशीय उपयोगिता के कारण अनूप स्थल एवं जलाशय अति विशिष्ट पर्यटन स्थल के रूप में अपनी पहचान बना चुका है। नीचे वर्णित अनूप स्थल हमारे देश का अन्तराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त पर्यटन स्थल बन चुका है जिसकी गिनती रामसर सूचि में की जाती है। (सन्1971 में ईरान के एक छोटे शहर रामसर में एक अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ जिसमें भाग लेने वाले 18 देशों नें अपने–अपने क्षेत्र के कुछ चुने हुए अनूप स्थलों को संरक्षित करने का लिखित संकल्प लिया। सन् 1981 में भारत भी इस समझौते में शामिल हुआ। अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के इन अनूप स्थलों को रामसर सुचि के नाम से जाना जाता है। आज विश्व के 118 देश इसके सदस्य हैं तथा 1014 जलाशयों को सूचीबद्ध किया जा चुका है।)

(i) केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान (राजस्थान):– $27^0$13′ उत्तीर एवं 77^0 32′ पूर्वी अक्ष पर स्थित तथा भरतपुर जिला के अन्तर्गत पड़ने वाला यह उद्यान आस–पास के कई जल स्त्रोतों से

पानी प्राप्त करता है। लगभग 1000 हेक्टेएर भूभाग हमेशा जलभग्न रहता है। शुरू में भरतपुर राजा का आखेट क्षेत्र रहा यह स्थान सन् 1956 में पक्षी अभयारण्य तथा सन् 1985 में राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा प्राप्त किया। आज इस राष्ट्रीय उद्यान को विश्व धरोहर में भी स्थान मिल चुका है। लगभग 350 प्रजातियों के जल पक्षी यहाँ सर्दियों के मौसम में देखे जा सकते हैं। साईबेरिया के सारस प्रतिवर्ष सिर्फ इसी जगह सर्दी बिताने आए करते हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के वनस्पतियों का भी यह निवास स्थान है। आगरा के साथ आज भरतपुर भी विश्व पर्यटन के मानचित्र पर लगभग समान महत्व का स्थान बना हुआ है। प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में देशी–विदेशी पर्यटक इस राष्ट्रीय उद्यान का भ्रमण करने आते है।

(ii) साम्भर झील (राजस्थान):– 26^0 52′ से 27^0 07′ उत्तरी तथा 74^0 54′ से 75^0 14′ पूर्वी अक्ष पर स्थित यह झील जयपुर से लगभग 60 कि०मी० की दूरी पर है। समुद्र तल से इसकी ऊँचाई 360 मीटर के लगभग है। लगभग 19000 हेक्टेएर क्षेत्र में फैला यह खारे पानी का झील है। दो छोटी बरसाती नदियों से इस झील में पानी आता है। वर्षों से इस झील से नमक प्राप्त किया जाता रहा है। गर्मी के मौसम में यह झील लगभग पूर्ण रूप से सूख जाता है। सर्दी के मौसम में यह झील अनेक जल–पक्षियों का आश्रय बन जाती है। खारे पानी का यह एकलौता झील पर्यटकों के लिए एक अनुपम आकर्षक का केन्द्र है।

(iii) लोकटक झील (मणिपुर):– $24^0$30′ उत्तर तथा 93^0 49′ पूर्व अक्ष पर तथा समुद्रतल से 765 मीटर की ऊँचाई पर स्थित यह झील इम्फाल के निकट ही है। पहले मणिपुर नदी की पानी से यह झील प्रति वर्ष वर्षा ऋतु में बन जाया करता था परन्तु बाद में एक बाँध बनाकर इसे स्थाई स्वरूप प्रदान किया गया। इस झील के जल सतह पर वनस्पति एवं शैवाभ की तैरती हुई चटाईयाँ पाई जाती है जो इस जलाशय की विशेषता है। सर्दियों में इस झील में अनेक संख्या में प्रवासी पक्षी आते हैं। लोकटक झील मणिपुर का एक अति महत्वपूर्ण पर्यटन स्थान है।

(iv)लोकटक झील (पंजाब):– 31^0 13′ उत्तर तथा 75^0 12′ पूर्व अक्ष पर तथा समुद्र तल से 225 मीटर की ऊँचाई पर स्थित यह झील व्यास एवं सतलुज नदी के संगम पर अवस्थित है। कभी 4100 हेक्टेएर क्षेत्र में फैले इस जलाशय का क्षेत्रफल सिकुड़ कर मात्र 2800 हेक्टेएर बच गया है। यह सरोवर प्रसिद्ध इंदिरा गाँधी नगर का उद्‌गम स्थान भी है। इस सरोवर मे 13 छोटे–छोटे परन्तु नयनाभिराम टापू हैं। जलाशय का लगभग 70 प्रतिशत भाग घने

उत्पलावित वनस्पतियों से ढ़का रहता है। कमल के विभिन्न प्रजातियाँ भी यहाँ बहुतायत से पायी जाती हैं। यह सरोवर अनेकों जल पक्षियों का चहेता प्रजनन स्थल रहा है अतः पक्षियों के जीवन चक्र में इनका विशिष्ठ योगदान होता है।

(v) वूलर झील (जम्मू एवं कश्मीर):– श्रीनगर से लगभग 34 कि० मी० की दूरी पर स्थित यह झील समुद्र से 1530 मीटर की ऊँचाई पर तथा 34^0 16′ उत्तर तथा 74^0 33′ पूर्वी अक्ष पर स्थित है। इस ताल की कुल क्षेत्रफल 18,900 हेक्टेएर के करीब है। यह एक प्राकृतिक झील है जिसमें झेलम नदी नांगली के पास प्रवेश कर के सोपोर के पास बाहर निकलती है। दलदली भूमि से धिरे इस सरोवर में विभिन्न प्रजातियों के जलोद्भिद पाए जाते हैं। वूलर झील भी पक्षियों के प्रवास एवं प्रजन्न स्थल के रूप में अति महत्वपूर्ण है।

पर्यटन जनित पर्यावरणीय संकट

जैसा कि पहले ही जिक्र किया जा चुका है, जलाशय एवं अनूप स्थल जहाँ एक ओर प्रवासी पक्षियों का आश्रय एवं प्रजन्न स्थल का कार्य करता है वहीं ऐसे स्थान पर्यटन एवं पिकनिक के लिए भी चुनिंदा स्थान होता है। जलाशयों की विशिष्टता ही आज उनके लिए अस्तित्व का संकट खड़ा कर रहा है। मनुष्यों का लगातार काफी संख्या में जुटना इन स्थानें के निखरता को भंग कर रहा है तथा यह बढ़ती मानवीय क्रिया कलाप पक्षियों को रूचिकर नहीं लगता है। पर्यटकों के द्वारा तेज संगीत का बजाना एवं उनकी मौज–मस्ती ध्वनी प्रदूषण को बढ़ावा दे रहा है। इससे पक्षियों को प्राकृतिक प्रणय क्रीड़ा में व्यवधान होता है। आज सभी जलाशयों पर आने वाली पक्षियों की संख्या में लगातार कमी होती जा रही है और पर्यावरण विद् इस कमी से काफी चिन्तित होते जा रहे है।

दूसरी समस्या पर्यटकों द्वारा फैलाए जाने वाले प्रदूषण से उत्पन्न होता है। प्लास्टिक एवं पौलीथीन बैग पर्यटकों के सामान का सबसे हानिकारक अवयव होता है जिसे अक्सर उपयोग के पश्चात वहीं छोड़ दिया जाता है। मिनरल जल के प्रचलन से उसके बोतलों का जलाशयों के इर्द गिर्द छोड़ दिया जाना भी एक आम बात है। इसके अतिरिक्त अन्य प्रकार के ठोस कचरों की मात्रा भी झील–तालाबों के आस पास आज कहीं भी देखा जा सकता है। इन अति हानिकारक प्रदूषकों के कारण दल–दल एवं पानी में पाये जाने वाले कीड़े एवं छोटे जलचर जन्तुओं की संख्या लगातार धरती जा रही है। ऐसे छोटे जन्तु प्रवासी पक्षियों का प्रकृतिक भोजन होता है और इनके अभाव में पक्षियों को भोजन समस्या का सामना करना पड़ जाता है। प्रवासी पक्षी आजकल इस समस्या के निदान स्वरूप अपना प्रवास स्थल एवं प्रवास मार्ग बदलते जा रहे हैं। भरतपुर कभी साईबेरियन का

चहेता प्रवास स्थान था परन्तु आज इस विशालकाय पक्षी का इस अनूप चिल्का में भी आगत पक्षियों की संख्या में 30 प्रतिशत तक की कभी देखी गई है।

जलाशयों के जैव विविद्यता मे मछलियों का काफी महत्वपूर्ण स्थान होता है और पर्यटन के बढ़ने से मछलियों की प्रजातियों तथा कुल संख्या दोनो में ही कभी महसूस की गई है। नौका सैर पर्यटन का एक अनिवार्य अंग बन चुका है। आज हर छोटे बड़े जलाशय में यांत्रिक तथा मानव चालित दोनों ही प्रकार की नौकाएँ देखी जा सकती है। नौकाओं के चलने से पानी में अस्वाभविक गति उत्पन्न हो जाती है जो मछलियों को खदेड़ने के लिए काफी कारगर होती है। इस प्रकार इन जलीय जीवों की संख्या में कभी होना स्वाभविक ही है। इसके अतिरिक्त मछली पकड़ना भी पर्यटकों का एक मनचाहा शौक होता है तथा इससे भी जैवविविद्यता में ह्रास होता है। कभी–कभी बड़ी मछलियाँ पानी में फेंके गए पालीथिन को ''जेली फिश'' समझ कर खा जाती हैं और वह उनके लिए काल साबित होता है। इस प्रकार पर्यटन के निरंकुश विकास से जलाशयों में मछलियों की संख्या में कमी होती जा रही है।

पर्यटन के विकास के साथ ही पर्यटकों को मूलभूत सुविधाओं को उपलब्ध करवाना भी एक मुख्य कार्य होता है। अतः जलाशयों एवं अनूप स्थानों के इर्द गिर्द होटलों, रेस्त्राँ, दूकानों इत्यादि का निर्माण शुरू हो जाता है। निर्माण कार्यों के होने से काफी बड़ी मात्रा में कचरा पैदा होता है जो कभी तो प्रत्यक्ष ही और कभी रिसाब के द्वारा जलाशय में आ जाता है। इस प्रकार के जमाव से जलाशयों की गहराई धीरे–धीरे कम हो जाती है। झीलों तथा तालाबों की धरती गहराई एक सामान्य समस्या है और इससे हमारे देश के लगभग सभी जलाशय प्रभावित हो रहे हैं। गहराई के घटने से जल की मात्रा भी घटती है और पूरा का पूरा पारिस्थितिकी तंत्र बिगड़ जाता है।

इस प्रकार यह आसानी से अनुभव किया जा सकता है कि पर्यटन के बढ़ने से जलाशयों तथा अनूप स्थलों के प्राकृतिक तत्वों एवं पर्यावरण पर गम्भीर असर पड़ता है। रामसर सम्मेलन में इस विषय पर काफी विस्तार से चर्चा हुई तथा इस घोषणा पर हस्ताक्षर करने वाले सभी देश (भारत सहित) अनूप एवं जलाशयों के संरक्षण के प्रति कटिबद्धता एवं एकजुटता का प्रदर्शन किया है। इस दिशा में पर्यटन उद्योग का भी सकारात्मक सहयोग अपेक्षित है।

चिल्का झील – एक अध्ययन

चिल्का झील भारत के पूर्वी तट का अति महत्वपूर्ण जलाशय है तथा यह अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन मानचित्र पर एक विशिष्ट स्थान रखता है। यह झील 19^0 54′ उत्तरी तथा 85^0 6′ से 85^0 35′ पूर्वी

के बीच स्थित है। इस झील में खारे एवं मीठे पानी का अनूठा सम्मिश्रण पाया जाता है। खारा पानी चिल्का से लगभग 29 कि०मी० दूर एक नहर से आता है जबकि मीठे पानी स्त्रोत दया नदी है जो महानदी की एक शाखा है। अनेक छोटे–छोटे नालों से भी चिल्का झील में पानी आता है। चिल्का का कुल क्षेत्रफल मानसून के महीनों मे लगभग 1000 वर्ग कि०मी० होता है, जो गर्मियों में सिकुड़कर मात्र 750 वर्ग कि०मी० हो जाता है। इस झील में कई टापू भी हैं जिनमें नलबाना, कालीजई एवं वलेरी महत्वपूर्ण हैं।

चिल्का की उत्पत्ति के विषय में एक प्रचलित किंवदन्ती है। ऐसा माना जाता है कि चिल्का की उत्पत्ति चौथी शताब्दी के आस–पास हुई। एक बार रक्तबाहु नाम का राक्षस समुद्र पार करके पवित्र शहर पुरी पर आक्रमण करने आ रहा था। रक्तबाहु अपने साथ बड़ी सेना, घोड़े एवं हाथियों का समूह भी लेकर आया था। अपने आक्रमण को गुप्त रखने के लिए अपने लश्कर को वह समुद्र तट से दूर लंगर डाल कर रोक रखा था तथा आक्रमण के लिए उचित मौके की तलाश में बैठा था। दो–तीन दिनों के बाद जानवरों का मल समुद्र में तैरता हुआ तट तक आ पहुँचा और पुरी निवासियों को आसन्न संकट का आभास हो गया। धार्मिक प्रकृति के पुरी निवासी शहर को छोड़ कर अन्यत्र चले गए। जब रक्तबाहु को इसकी सूचना मिली तो वह गुस्से से विफर गया और समुद्र को ही अपनी असफलता का जिम्मेदार माना। अतः वह समुद्र पर ही आक्रमण कर दिया। समुद्र नें इस स्थिति का सामना काफी चतुराई से किया। वह पहले तो पीछे हट गया तथा उसके बाद इतने वेग से आगे बढ़ा कि रक्तबाहु अपनी सेना सहित जलमग्न हो गया। परन्तु वेग से आगे बढ़ने के क्रम में समुद्र अपनी सीमा से कुछ और आगे गया जो आज चिल्का के रूप में देखा जा सकता है।

चिल्का के पानी का सर्वाधिक महत्वपूर्ण गुण उसका खारापन है, जो कि अलग–अलग स्थान पर तथा वर्ष के विभिन्न महीनों में जहाँ यह खारापन लगभग शून्य होता है वहीं गर्मियों में यह 30 इकाई तक पहुँच जाता है। तापमान भी 18^0C. से 27^0C. के बीच बढ़ता घटता रहता है। पानी की गहराई भी अलग–अलग स्थानों पर भिन्न भिन्न होती है।

चिल्का के पानी में जलीय कीड़े कृमि, शैवाल इत्यादि की कई प्रजातियाँ पाई जाती हैं। मछलियों की भी अनेक प्रजातियाँ चिल्का के पानी में पाई जाती है। चिल्का के जैव विविधता का सबसे विशिष्ट अंग उसका प्रवासी पक्षियों का लगभग 150 प्रजाति हैं, जो प्रतिवर्ष सुदूर क्षेत्रों से यहाँ आता है।

भारत का सबसे बड़ा तथा सबसे खूबसूरत जलाशय देशी एवं विदेशी पर्यटकों के लिए एक अति प्रचलित स्थान है। प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में यहाँ पर्यटक आते हैं। पर्यटकों की इस बढ़ती

भीड़ का दुष्प्रभाव इस झील पर देखा जा सकता है। एक अध्ययन के अनुसार चिल्का में कचरे के पहुँचने से यह झील 1.5 वर्ग कि०मी० प्रति दस वर्ष के दर से सिकुड़ता जा रहा है। मुम्बई नैचुरल हिस्ट्री सोसाइटी नें अपने एक रिपोर्ट में कहा है कि इस झील में पक्षियों की संख्या में लगातार गिरावट आ रही है। सन् 1989–90 में जहाँ 5,00,000 के लगभग प्रवासी पक्षी यहाँ आए थे। सन् 1995–96 में यह संख्या घट कर 3,20,000 हो गई तथा सन् 1999–2010 में यह संख्या और भी सिकुड़कर सिर्फ 64,000 पर आ पहुँची है। मछलियों की प्रजाति भी 150 से घट कर 98 पर आ गई है।झील के खारेपन में भी अप्राकृतिक रूप से गिरावट दर्ज किया गया है, जिसका दुष्प्रभाव जैव विविद्यता पर देखा जा सकता है। मोटर नौकाओं के चलने से जल प्रदूषण की समस्या गम्भीर हो गई है तथा जल में होने वाले उद्वेलन से भी जीव–जन्तुओं को काफी खतरा पहुँच रहा है। यदि समय रहते उचित कदम नहीं उठाया गया तो इस झील का अस्तित्व संकट में पड़ जाएगा।

डल झील – एक अध्ययन

श्रीनगर का विश्व प्रसिद्ध डल झील $34^0 5'$ से $34^0 10'$ उत्तरी तथा $74^0 8'$ से $74^0 9'$ पूर्वी के बीच फैला हुआ है। यह जलाशय लगभग 1600 मीटर की ऊँचाई पर है तथा इसका कुल द्यारक क्षेत्रफल 300 वर्ग कि०मी० है। इस झील में पानी उत्तरी दिशा से आने वाली तलबेल स्त्रोत से गिरता है। कुछ अन्य छोटे–मोटे नाले भी डल झील में पानी पहुँचाते हैं। डल का कुल जल सतह 11.45 वर्ग कि०मी० तथा जल की मात्रा $9.83X10^6$ धन मीटर के लगभग है। डल झील के तीन ओर हजरतबल, बड़–डल एवं गगरीबल स्थित है। झील के किनारे–किनारे तैरता बागीचा एवं हाऊस बोट की कतार देखी जा सकती है। डल झील के चारों ओर अनेको विश्राभालय भी देखे जा सकते हैं।

पृथ्वी पर स्वर्ग माने जाने वाले श्रीनगर का एक अति खूबसूरत स्थान डल झील है। अतः यहाँ पर्यटकों की भीड़ रहना एक स्वाभाविक बात। आज की विपरीत परिस्थिति को यदि नजर अंदाज करें तो पर्यटन श्रीनगर तथा डल क्षेत्र की पहचान कही जा सकती है। इन्हीं कारणों से इस झील के इर्द गिर्द आबादी में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। सन् 1977 में जहाँ आबादी मात्र 15,000 के निकट थी वहीं सन् 1987 में यह बढ़कर 19,980 तक पहुँच गई। सन् 2007 में यह आबादी 1,50,540 की सीमा को छू गई। यह बढ़ती जनसंख्या मुख्यतः पर्यटन सम्बन्धी व्यवसाईयों के बढ़ने के कारण हुई है। बढ़ती जनसंख्या के कारण जल प्रदूषण की समस्या बढ़ी है तथा डल झील के पानी मे फास्फोरस तथा नाईट्रोजन के जैसे तत्वों की मात्रा निरन्तर बढ़ी है। देखें नीचे दी गई तालिका।

सन्	फास्फोरस	नाईट्रोजन
1995	8.9 मि०ग्रा०/ली०	24.6 मि०ग्रा०/ली०
2000	11.8 मि०ग्रा०/ली०	56.4 मि०ग्रा०/ली०
2005	13.6 मि०ग्रा०/ली०	69.3 मि०ग्रा०/ली०
2011	14.2 मि०ग्रा०/ली०	71.8 मि०ग्रा०/ली०

फास्फोरस तथा नाईट्रोजन की मात्रा बढ़ने से डल झील में बड़े जलोद्मिद जैसे जलकुम्भ, हाईड्रिला इत्यादि की संख्या में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है तथा इससे डल झील की प्राकृतिक खूबसूरती में काफी कमी आई है। इन जलोद्मिद के कारण जल का क्षेत्रफल भी घटता जा रहा है। अतः डल झील को भी गैर जिम्मेदाराना पर्यटन से बचाना आवश्यक होगा।

मैथन – एक अध्ययन

झारखण्ड के धनबाद जिले से लगभग 35 कि०मी० दूर स्थित मैथन एक कृत्रिम जलाशय है तथा यह $23^0 44'$ उत्तरी एवं 87^0 पूर्वी अक्ष पर स्थित है। मैथन शब्द "माई–का–थान" का अपभ्रंश है तथा यह नाम नजदीक में ही अवस्थित माँ कल्याणेश्वरी के मंदिर के कारण पड़ा है। एक मान्यता के अनुसार कल्याणेश्वरी मंदिर का निर्माण आज से लगभग 500 वर्ष पूर्व तत्कालीन राजा कल्याण सिंघा ने करवाया था। यहाँ की देवी को श्यामारूपा नाम से भी जाना जाता है। इस मंदिर के प्रति झारखण्ड एवं पश्चिम बंगाल के लोगों में असीम आस्था है तथा यहाँ प्रतिदिन हजारों भक्त दर्शन के लिए आते हैं। इस स्थान का दूसरा महत्वपूर्ण पक्ष बराकर नदी पर बना बहुउद्देशीय बाँध है। 27 सितम्बर सन् 1957 को तत्कालीन प्रधानमंत्री पं० जवाहरलाल नेहरू के द्वारा उद्धाटित इस बाँध के कारण ही मैथन जलाशय अस्तित्व में आया। लगभग 10,000 हेक्टेयर क्षेत्रफल में फैला यह जलाशय अपनी नैसर्गिक प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण पर्यटन स्थल के रूप में काफी प्रचलित रहा है। नीचे दिए गए तालिका में वर्ष 2010 के विभिन्न महीनों में मैथन आने वाले पर्यटकों की संख्या से इस पर्यटन स्थल के महत्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

एक अन्य अध्ययन में मैथन के विभिन्न स्थानों से मिट्टी की नमूना लिया गया तथा उसमें उपस्थित कार्बनिक पदार्थों की मात्रा को मापा गया। ऐसा देखा गया कि वर्ष के जिन महीनों में पर्यटकों की अधिकता रहती है उन्हीं महीनों में कार्बनिक पदार्थों की मात्रा में भी अप्रत्याशित वृद्धि हो जाती है। इससे भी यह स्पष्ट हो जाता हैं कि पर्यटन के कारण मैथन के पर्यावरणीय घटकों की गुणवत्ता में कमी आती है।

स्थान	दिसम्बर–मार्च	अगस्त–नवम्बर	अप्रैल–जुलाई
1	26.31	20.21	14.31
2	22.46	18.31	10.11
3	25.81	17.01	10.34
4	21.31	14.31	10.62
5	18.31	12.80	9.40

(कार्बनिक पदार्थ ग्राम/100 ग्राम मिट्टी में)

मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की अधिकता बचे खुचे भोजन एवं अन्य पदार्थों के फेंके जाने से होती है। मैथन जलाशय पक्षियों तथा कुछ प्रवासी पक्षियों के लिए भी जाना जाता है। परन्तु पर्यटन सम्बन्धी गतिविधियों के बढ़ने से इनकी संख्या में भी भारी कमी देखी गई है।

इस प्रकार ऐसे कई अध्ययन रिर्पोट आज उपलब्ध है जिनके आधार पर यह कहा जा सकता है। कि पर्यटन उद्योग के निरन्तर बढ़ने से जलाशयों एवं अनूप स्थानों की स्थिति में गिरावट आई है। पर्यावरण प्रदूषित हुआ है और जलाशय अपना सौन्दर्य खोते जा रहे हैं। समय रहते यदि इस दिशा में ठोस कदम नहीं उठाया गया तो यह स्थिति खुद पर्यटन व्यवसाय के लिए खतरनाक साबित हो सकती है।

महीना		पर्यटकों की संख्या (लाख में)
जनवरी	–	2.81
फरवरी	–	2.11
मार्च	–	1.98
अप्रैल	–	1.49
मई	–	1.08
जून	–	0.98
जुलाई	–	0.85
अगस्त	–	1.01
सितम्बर	–	1.43
अक्टूबर	–	1.62
नवम्बर	–	1.77
दिसम्बर	–	2.78

एक अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है। कि मैथन जलाशय के पानी का रासायनिक गुण पर्यटकों के संख्या पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अधिक संख्या में पर्यटकों के आने से पानी अपेक्षाकृत अधिक प्रदूषित हो जाता है। जलाशय के इर्द–गिर्द पिकनिक तथा नौका विहार इत्यादि से जल का प्रदूषित होना स्वाभाविक है। नीचे दिए गए तालिका में यह पक्ष काफी स्पष्ट हो जाता है।

तत्व	अप्रैल–जुलाई	अगस्त–नवम्बर	दिसम्बर–मार्च
पी०एच०	8.2	7.5	7.1
कुल ठोस (पी०पी०एम०)	250	380	485
कुल कठोरता (पी०पी०एम०)	120	180	180
क्लोराईड (मि०ग्रा०/ली०)	20	18	10
बी०ओ०डी० (मि०ग्रा०/लि०)	12	10	20
सी०ओ०डी० (मि०ग्रा०/लि०)	50	490	588
डी०ओ० (मि०ग्रा०/लि०)	5.4	5.0	8.8
बैक्टीरिया (एम०पी०एन०)	900	1200	1600

भूमि स्वरूप संरक्षण में पर्यटन का योगदान

किसी भी स्थान विशेष पर पर्यटन का विकास वहाँ की नैसर्गिक भूगोल पर काफी निर्भर करता है। खूबसूरत एवं विशाल पहाड़, दूर–दूर तक विस्तृत मरूस्थल अथवा अथाह जल सम्पदा वाले सागर–तट पर्यटकों को अति प्रिय होते हैं। सैलानियों के आकर्षण का प्रमुख कारण वहाँ का अनूठा भूगोल ही होता है तथा उसमें होने वाला कोई भी परिवर्तन लोगों को स्वीकार्य नहीं होता है। जैसलमेर के सुनहरे रेत से भरे मरूस्थल में यदि कंक्रीट की बहुमंजिली ईमारत बना दी जाए तो निश्चय ही वह आँखों को खटकने लगेगा क्योंकि सैलानी वहाँ रेत एवं सिर्फ रेत का अनुभव करना चाहेंगें। भौगोलिक अवस्था में होने वाला छोटा से छोटा परिवर्तन न सिर्फ अप्रिय होता है बल्कि उसका दूरगामी प्रभाव वहाँ के पारिस्थितिक तन्त्र पर भी पड़ता है। समुद्र तट भी पर्यटन का एक पसंदीदा गंतव्य स्थान रहा है। एक समय था जब मुम्बई का चौपाटी एवं जुहू तट सैलानियों से भरा रहता था। परन्तु उचित देख–रेख के अभाव में तथा गैरसरकारी तरीके से बने संरचनाओं के कारण लोग यहाँ अपेक्षित प्राकृतिक सौन्दर्य नहीं पाते हैं। कुछ हद तक यह खतरा अन्य मशहूर तटों पर भी मंडरा रहा है। पुरी, गोपालपुर, दीघा इत्यादि का भी मौलिक स्वरूप बदल रहा है। इसके परिणाम स्वरूप पर्यटक अब अपेक्षाकृत शांत एवं मौलिक समुद्र–तट का आनन्द लेने के लिए अण्डमान–निकोबार एवं लक्ष्यद्वीप को प्राथमिकता दे रहे हैं। लगभग यही अवस्था पर्वतीय क्षेत्रों का भी है। नित नए बनते भवनों ने शिमला, नैनीताल, मसूरी इत्यादि का स्वरूप काफी हद तक बदल दिया है। इस बदलाव का दुष्परिणाम अनेक समस्याओं जैसे भूगर्भीय जल की कमी, वानास्पति आच्छादन का सिकुड़ता चला जाना एवं वन्यप्राणियों के लुप्त होने के रूप में हमारे समक्ष आ रहा है।

इस अपेक्षाकृत प्रतिकूल परिस्थित में आशा की किरण के रूप में पर्यटन उद्योग हमारे सामने है। पर्यटन व्यवसाय मूल रूप से प्राकृतिक सौन्दर्य एवं मौलिक भौगोलिक अवस्था पर निर्भर करता है तथा इसमें हुआ कोई भी बदलाव व्यवसाय पर बुरा असर डालता है। अतः पर्यटन व्यवसाय से जुड़े लोगों ने स्थान विशेष के भौगोलिक संरक्षण के प्रति अपनी रूचि एवं जागरूकता दिखाना प्रारम्भ कर दिया है तथा इसका सुखद परिणाम धीरे–धीरे हमारे सामने आने लगा है। वैसे इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता है कि गैर जिम्मेदाराना पर्यटन का विभिन्न स्थानों के स्वरूप में बदलाव आने के पीछे मुख्य भूमिका रही है। बिना सोचे समझे बनाए जाने वाले होटलों एवं दुकानों न लगभग हर पर्यटन स्थल प्रबन्धकों के सोच में काफी परिवर्तन लाया है तथा अब हमारे समक्ष ऐसे उदाहरण हैं, जिससे भूमि स्वरूप को बिगड़ने से रोका जा सका है। हरियाणा पर्यटन विभाग के द्वारा चलाए जाने वाले "हाईवे सर्विसेज" से भूमि स्वरूप में काफी धनात्मक परिवर्तन आया है

तथा उच्च पथ के किनारे का बंजर भूमि अब खूबसूरत पर्यटक स्थल के रूप में विकसित हो चुका है। हरियाणा प्रदेश में देखने योग्य इस सुखद उदाहरण को विस्तृत वर्णन प्रासंगिक होगा।

अपनी भौगोलिक अवस्था के कारण हरियाणा प्रदेश हमेशा से व्यापारिक दृष्टि से महत्वपूर्ण रहा है। दिल्ली को लाहौर तथा दिल्ली को जयपुर एवं अजमेर से जोड़ने वाला पथ हरियाणा से होकर ही गुजरता है तथा यह दोनों रास्ते प्राचीन काल से ही काफी व्यस्त रहे हैं। सत्तर के दशक के प्रारम्भ से ही हरियाणा सरकार ने उच्च पथों के दोनो ओर व्यापारियों तथा सैलानियों को उचित सुविधाएँ उपलब्ध करवाने के लिए एक अति महत्वकांक्षी परियोजना का सूत्रपात किया, जिसमें राज्य के पर्यटन विभाग ने काफी सराहनीय भूमिका अदा की। उच्च पथ पर कुछ–कुछ दूरी पर ऐसे प्रमुख स्थानों को चिह्नित किया गया जहाँ पर होटल, विश्रामालय, संचार सुविधा इत्यादि उपलब्ध करवाने के साथ–साथ प्राकृतिक सौन्दर्य से परिपूर्ण बाग–बगीचे बनाए गए। खाने के विभिन्न दूकानें लगाई गई जहाँ भारतीय, चीनी एवं अन्य व्यंजन उपलब्ध है। इन सुविधाओं से प्रारम्भिक लाभ तो यात्रियों को हुआ परन्तु धीरे–धीरे इनकी शोहरत बढ़ने लगी और आस–पास के महानगरों से पर्यटक यहाँ सप्राहान्त बिताने आने लगे। इस प्रकार एक ओर तो पर्यटन विभाग के प्रयास से बंजर भूमि पर्यटक स्थल के रूप में परिवर्तित हुआ तथा दूसरी ओर इससे आस–पास के गाँवों और कस्बों का सामाजिक अवस्था भी काफी मजबूत होने लगा। इस प्रकार पर्यटन उद्योग को सिर्फ भूमि स्वरूप को बिगाड़ने वाली क्रिया मानना नितान्त गलत होगा। पर्यटन के सहयोग से न सिर्फ सुन्दर भूमि स्वरूप को सुरक्षित रखा जा सकता है बल्कि उसमें धनात्मक परिवर्तन भी लाया जा सकता है। हरियाणा उच्च पथ पर उपलब्ध कुछ ऐसे ही दर्शनीय स्थानों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है –

1. **किंगफिशर** : जिला– अम्बाला, चंडीगढ़ से लगभग 55 कि०मी० दूर। वातानुकूलित एंव गैर वातानुकूलित कमरे उपलब्ध। 9 एकड़ में फैले इस स्थान पर विभिन्न स्थानों के भोजन, मद्यपान, सम्मेलन कक्ष, तरण–ताल, व्यायामशाला, कार पार्किंग, आईस क्रीम एंव अति खूबसूरत मैदान उपलब्ध है।

2. **ब्लू जय** : जिला–पानीपत, दिल्ली से लगभग 70 कि०मी० की दूरी पर स्थित। रात बिताने के लिए वातानुकूलित तथा गैरवातानुकूलित कमरे उपलब्ध हैं। लगभग एक एकड़ में फैले तथा अत्यन्त ही सुरूचिपूर्ण तरीके से सजाए गए इस भूखंड पर एक मशहूर होटल भी है, जहाँ दिल्ली से आकर लोग मक्के की रोटी, सरसों का साग एवं हरियाणवी लस्सी का स्वाद लेते हैं।

3. **ओआसिस (उछना)** : करनाल जिले में स्थित तथा दिल्ली से लगभग 125 कि०मी० दूर स्थित इस स्थल पर यात्रियों के विश्राम के लिए आधुनिक सुविधाओं से परिपूर्ण झोपड़ियाँ बनाई गई हैं। पाँच एकड़ में स्थित इस आकर्ष स्थल पर एक खूबसूरत झील भी है। यहाँ रेस्त्राँ, बार, आईसक्रीम एवं जूस पार्लर, प्राथमिक उपचार, बैंक एवं डाकघर की सुविधाएँ उपलब्ध हैं।

4. **मैगपी** : जिला – फरीदाबाद, दिल्ली से सिर्फ 30 कि०मी० की दूरी पर स्थित इस स्थान पर वातानुकूलित तथा साधारण प्रकार के लगभग 30 कमरे उपलब्ध हैं। भोजनालय, सम्मेलन कक्ष, एवं बाग–बगीचे से सुसज्जित इस स्थल पर पार्टियों के लिए बड़े हॉल भी बनाए गए हैं।

5. **डबचिक** : दिल्ली से लगभग 90 कि०मी० दूर फरीदाबाद जिले में यह रमणीक स्थल लगभग 13 एकड़ भू–भाग में फैला है। यात्रियों के विश्राम के लिए वातानुकूलित एवं गैर वातानुकूलित कमरे तथा ग्रामीण शैली में बनी झोपड़ियाँ भी बनाई गई हैं। साज–सजावट मूल हरियाणवी शैली में किया गया है। यहाँ पारम्परिक शैली के भोजनालय तथा फास्ट–फूड के स्टॉल भी हैं। संचार, पेट्रोल पम्प, सामान्य जरूरत के सामानों की दुकान, कॉफी एंव शीतल पेय के स्टॉल आदि बनाए गए हैं। पूरे परिवेश को वृक्षों एवं फूल वाले पौधों से आकर्षक रूप से सजाया गया है। इस प्रकार यह स्थान एक पर्यटन स्थल के रूप में चर्चित हो चुका है।

6. **यादवेन्द्र बाग पिंजोर** :चंडीगढ़ से सिर्फ 22 कि०मी० की दूरी पर स्थित यह ऐतिहासिक स्थल आज एक प्रमुख पर्यटन स्थल के रूप में विकसित हो चुका है। यहाँ विभिन्न स्तर के आधुनिक सुविधाओं से परिपूर्ण कमरें, सम्मेलन कक्ष एवं हॉल बने हैं। प्राचीन शैली में संचार सुविधा, बार एवं आईस क्रीम पार्लर अर्थात मौज–मस्ती के सभी साधन यहाँ उपलब्ध हैं।

7. **नीलकंठ कृष्णा धाम** : कुरूक्षेत्र जिले में यह रमीण धार्मिक स्थल दो एकड़ क्षेत्रफल में फैला हुआ है। यहाँ रात्रि विश्राम के लिए कमरे तथा सार्वजनिक विश्रामालय, लॉकर, सामान सुरक्षित रखने के लिए अमानत घर तथा तीर्थ यात्रियों के लिए शाकाहारी भोजन की व्यवस्था है।

8. **उछना ताल** : करनाल जिले में स्थित तथा दिल्ली से करीब 125 कि०मी० दूर इस ताल का निर्माण सन् 1972 में किया गया। 17 एकड़ में फैले इस खूबसूरत ताल में पर्यटन विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। रात्रि विश्राम के लिए इस परिसर में विभिन्न श्रेणियों के कमरे उपलब्ध हैं। इसके अतिरिक्त यहाँ नौका विहार, तैराकी एवं मछली पकड़ने की सुविधाएँ भी उपलब्ध हैं। विभिन्न व्यंजनों को परोसने वाले रेस्त्राँ एवं बार पर्यटकों के लिए विशेष आकर्षण का केन्द्र है।

9. **बड़खल ताल :** बड़खल ताल फरीदाबाद जिले में स्थित है तथा यह दिल्ली से मात्र 24 कि०मी० दूर है। पर्यटकों के विश्राम के लिए आधुनिक झोपड़ियाँ एंव विभिन्न स्तर के कमरे उपलब्ध हैं। ताल में नौका विहार, तैराकी, मछली पकड़ने की सुविधाओं के साथ–साथ अन्य जलक्रीड़ा का अनुभव भी प्राप्त किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त, बैंक, रेस्त्राँ, पेट्रोल पम्प इत्यादि की भी व्यवस्था है।

10. **हरियाल/नरवाना :** जींद जिले का यह स्थल चंडीगढ़ से करीब 150 कि०मी० दूर है। यह स्थान प्राकृतिक, ऐतिहासिक एवं नैसर्गिक सौन्दर्य का एक अनूठा संगम है। कहा जाता है कि एक सूफी संत हजरत साहब यहाँ रहा करते थे तथा एक दिन अचानक ही वह भूमि के भीतर समा गए। उनकी याद में एक मकबरे का निर्माण यहाँ किया गया है। यहाँ से 25 कि०मी० की दूरी पर लगभग 1300 वर्ष पूर्व निर्मित एक मंदिर भी है। हरियाल परिसर लगभग तीन एकड़ में फैला है तथा यहाँ प्राकृतिक छटा के बीच विश्रमालय उपलब्ध है। इस स्थान पर ठहरना भारत के ग्रामीण परिवेश का अनुभव प्रदान करता है तथा सप्राहान्त बिताने के लिए यह एक उपयुक्त स्थान है।

इसके अतिरिक्त हरियाल पर्यटन विभाग से ऐसे अन्य कई परिसर विकसित किए गए है, जो एक तरफ तो भूमि स्वरूप को निखारकर उसमे चार चाँद लगा रहा है तथा दूसरी ओर पर्यटन विभाग को भी नई बुलंदी की तरफ ले जा रहा है। कैथल जिले का कोयल, गुड़गाँव का शमा, भिवानी का रेड़ रॉबिन, रोहतक का मैना, जींद जिले का बुलबुल, यमुना नगर का ग्रे पैलिकन, गुड़गाँव का सोहना, यमुना नगर का ही पिनटेल तथा गुड़गाँव का सारस पक्षियों के नाम पर विकसित नयनाभिरामी छटा वाले परिसर है, जिन्हें विकसित करके पर्यटन उद्योग में यह सिद्ध कर दिया है कि उचित प्रबन्धन के आधार पर भूमि स्वरूप का न सिर्फ संरक्षण बल्कि विकास भी सम्भव है तथा ऐसा करते हुए पर्यटन व्यवसाय में भी वृद्धि की जा सकती है। इन प्राकृतिक स्थलों में से कई जैसे दमदमा ताल एवं उछना आजकल विभिन्न साहसिक खेलों के केन्द्र के रूप में भी विकसित हो रहे हैं। इस प्रकार साहसिक पर्यटन के क्षेत्र में भी इन स्थानों ने अपना वर्चस्व कायम किया है।

कराकास घोषणा

राष्ट्रीय उद्यान एवं संरक्षित क्षेत्र जहाँ एक ओर प्रकृति पर्यटन के लिए एक नया अवसर प्रदान करते हैं वहीं पर्यावरण विद् इनके संरक्षण के प्रति काफी संवेदनशील एवं चिन्तित रहते हैं। वेनेजुएला के कराकस में चतुर्थ विश्व कांग्रेस का आयेजन हुआ, जिसमें लगभग पन्द्रह सौ पर्यावरण शास्त्री विश्व के कोने कोने से भाग लेने आए। बारह दिन तक चले विचार–विमर्श के पश्चात एक

दिशा–निर्देश तय किया गया, जिसे कराकस घोषणा के नाम से जाना जाता है। यह दिशा–निर्देश जवाबदेह पर्यटन के लिए प्रासंगिक होगा। घोषणा के कुछ प्रमुख बिन्दु निम्नलिखित हैं–

1. प्रकृति का अपना नैसर्गिक महत्व होता है तथा इसे सम्मान से देखना चाहिए। मात्र इसकी उपयोगिता पर नजर रखना अनुचित होगा।
2. मानव समाज का भविष्य आपसी भाईचारे तथा प्रकृति के प्रति इनके सौहार्दपूर्ण व्यवहार पर ही निर्भर है।
3. विकास प्रकृति की विविधता एवं उत्पादकता पर ही निर्भर होता है।
4. प्राकृतिक सम्पदा में काफी तेजी से कमी आ रही है तथा इसका प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि, प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन विकास का दोषपूर्ण तरीका प्रदूषण एवं अनुचित अर्थशास्त्र ही है।
5. मानव के प्रति इन खतरों को तब तक टाला नही जा सकता है जब तक विकास की दिशा एवं गति सही न हो।
6. राष्ट्रीय उद्यान एवं संरक्षित क्षेत्रों का विकास इस प्रकार से हो, जिससे स्थानीय समुदाय के हितों की रक्षा हो। संरक्षित स्थल अपनी जैव विविधता एवं वन सम्पदा के लिए अति महत्त्वपूर्ण हैं तथा इनका प्रबन्धन अति संवेदनशील तरीके से किया जाना चाहिए।
7. संरक्षित क्षेत्र अपने देश के कुछ अति विलक्षण प्राकृतिक स्थान, वन्य प्राणी आवास तथा सांस्कृतिक धरोहरों को समाहित किए रहते हैं अतः इनका विनाश अपूरणीय क्षति होता है।
8. ऐसे क्षेत्र पारिस्थितिक तन्त्र का मेरूदंड़ होता है तथा बहुत ही महत्त्वपूर्ण प्राकृतिक आयामों यथा वर्षा, भूमि की उर्वरता, उचित तापमान, प्राकृतिक संसाधन इत्यादि इन पर निर्भर रहता हैं। अतः राष्ट्रीय उद्यान एवं संरक्षित क्षेत्रों में होने वाला परिवर्तन राष्ट्र एवं समाज पर दूरगामी प्रभाव डालता है।
9. ऐसे क्षेत्र अक्सर प्राचीन जनजातियों का मूल निवा होता है। अतः जनजातीय समुदाय का अस्तित्त्व एवं उनकी संस्कृति, सुरक्षित क्षेत्रों के संरक्षण पर काफी निर्भर होता है।
10 सुरक्षित क्षेत्रों में ऐसे प्राकृतिक भूखंड आते हैं, जो लम्बे समय से मानवजाति एवं प्रकृति के बीच के तारतम्य को प्रदर्शित करता है।
11 इन स्थानों का वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, आध्यत्मिक एवे मनोरंजन के क्षेत्र में काफी महत्त्व होता है।

12 संरक्षित क्षेत्रों का किसी भी राष्ट्र की अर्थव्यवस्था एवं विकास में प्रत्यक्ष एवं परोक्ष योगदान होता है।

13 इनके महत्त्व को ध्यान में रखते हुए, संरक्षित क्षेत्र को विकास योजनाओं के प्रारूप बनाते समय विशेष महत्त्व देना चाहिए।

14 गैर सरकारी संगठनों एवे निजि संस्थाओं को राष्ट्रीय उद्यान स्थापित करनें एवं उनके प्रबन्धन में विशेष रूचि दिखानी चाहिए।

15 सरकारी एवं गैर सरकारी संगठनों को राष्ट्रीय उद्यान के प्रति आय नागरिक को संवेदनशील बनाना चाहिए तथा इसके लिए उन्हें उचित शिक्षा देनी चाहिए।

16 पर्यटन समेत अन्य उद्योगों को सुरक्षित क्षेत्र के संरक्षण के प्रति अधिक संचेत करना चाहिए।

17 संरक्षित क्षेत्र की जैव विविधता को अक्षुण्ण रखने के लिए पर्यावरण शिक्षा पर विशेष बल दिया जाना चाहिए।

स्थिति की भयानकता और भी स्पष्ट हो जाती है जब हिमालय के भौगोलिक विशेषता पर ध्यान दिया जाता है। हिमालय का 5000 मीटर से 7500 मीटर की उँचाई वाला क्षेत्र उच्चत्तर हिमालय कहलाता है। यहाँ पर घाटियाँ उत्यन्त ही दुर्गम हैं तथा चढ़ाई काफी तीखी हैं यहाँ पाई जाने वाली नदियाँ अत्यन्त वेग वाली होती है। उच्चत्तर हिमालय के दक्षिण में लघुतर हिमालय अवस्थित है, जिसकी अधिकतम उँचाई 2000 मीटर होती है। लधुतर हिमालय में पाई जाने वाली ढ़लान अपेक्षाकृत कम होती है अतः यहां पर आबादी अधिक है। उच्चतर एवं लघुतर हिमालय के बीच मध्य पर्वतीय श्रृंखला पाई जाती हैं, जो भूगर्भीय दृष्टिकोण से अति सक्रिय हैं। संयोगवश इसी सक्रिय क्षेत्र में आज पर्यटन तीव्र गति से विकसित हो रहा है। अतः इस संवेदनशील क्षेत्र में मानव क्रियाकलाप स्थिति को और भी सोचनीय बना दिया है।

पिछले कुछ वर्षो के अखबार की सुर्खियों पर नजर डालें तो पर्वतीय पर्यावरण से हुए छेड़–छाड़ का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देगा।

– सितम्बर 1998, मानसरोवर से लौटते समय तीर्थयात्री विभिन्न गाँवों में रात बिता रहे थे। अचानक हुए भू स्खलन से एवे आई बाढ़ से करीब एक दर्जन गॉव पूरी तरह से नष्ट हो गए। हजारों यात्री एवं ग्रामवासी अकाल मृत्यु के शिकार हुए।

– जुलाई 1983, अल्मोड़ा जिले का करनी ग्राम आधे घंटे के अन्दर अपनी आबादी एवं पशुधन समेत नष्ट हो गया। कारण था बादल का फटना। बादल का फटना पर्वतीय क्षेत्र के लिए

कोई नई घटना नहीं है, परन्तु मनुष्यों के द्वारा वृक्ष विहीन बनाए गए पर्वत श्रृंखलाओं पर इसका सीधा असर हुआ और लाखों टन कचरे एवं पत्थर के भीतर पूरा गॉव दब गया।

– सितम्बर 1983, सिक्किम के मनगन ग्राम के पास कई भूस्खलन हुए। लगभग 350 लोग मारे गए, 25000 बेघर हो गए और लगभग 10000 पर्यटक हफ्तों फंसे रहे।

– अगस्त 1989, मंदाकिनी की घाटी में स्थित कुंथा ग्राम अचानक भूस्खलन के चपेट में आया।

ऐतिहासिक पारिस्थितिक संरक्षण में पर्यटन का योगदान

ऐतिहासिक संरचनाए एवं स्थान किसी भी समाज के लिए एक अति महत्वपूर्ण धरोहर होता है तथा उनका उचित रख–रखाव एवं संरक्षण एक संवेदनपूर्ण समस्या है। दूसरी ओर ऐतिहासिक महत्व के स्थान पर्यटन उद्योग के लिए अति महत्वपूर्ण होते हैं क्योंकि प्राचीन समय में झांकना मनुष्य के कौतूहल को कुछ हद तक शांत करने में सक्षम होता है। अतः ऐतिहासिक स्थान हमेशा ही पर्यटन मानचित्र पर अपना महत्वपूर्ण स्थान पाता रहा है जहाँ यूरोप से आनेवाले पर्यटकों के लिए आगरे का ताजमहल देखना एक आवश्यकता बन चुका है वहीं भारत से बाहर जाने वाले सैलानियों को मिश्र का पिरामिड अथवा चीन का दीवार देखना एक अविस्मरणीय अनुभव होता है। इन्हीं कारणों से ऐतिहासिक स्थल को संरक्षित एवं सुरक्षित रखना पर्यटन उद्योग के हित में है तथा इस ध्रुव सत्य का लाभ प्राचीन काल के धरोहरों का मिल रहा है। प्रीचन स्मारकों को देखने के लिए सरकार के द्वारा प्रवेश शुल्क लगाने की व्यवस्था की गई है तथा इस प्रकार उपार्जित धन का सदउपयोग इन स्मारकों के रख–रखाव पर किया जाता है। इस दिशा में हुए प्रयास का एक अनुकरणीय उदाहरण आगरा में देखने का मिलता है। मथुरा में जब तेलशोधक कारखाना लगाया जा रहा था तब लोगों को ताजमहल के वायु प्रदूषण के कारण धूमिल पड़ने की सम्भावना की चिन्ता महसूस हो रही थी। जाति के सम्भावित क्षति से पर्यटन उद्योग को काफी हानि होने की सम्भावना व्यक्त की जा रही थी और सरकारी तथा गैरसरकारी संगठनों ने इस स्थिति पर काबू पाने के प्रयास में जुट गए थे। विशेषज्ञों के सुझाव पर ताजमहल के चारो तरफ हरित पट्टी बनाने का कार्य प्रारम्भ हुआ। उन्नत किस्म के वृक्ष चारों ओर लगाए गए। इसके अतिरिक्त सुंदर पौधों एवं अन्य श्रेणी के वनस्पति भी चारों तरफ लगाए गए। आज इन पेड़–पौधों ने पर्याप्त वृद्धि कर ली है तथा आज ताजमहल वायु प्रदूषण से काफी सुरक्षित हो चुका है। इतना ही नहीं ताज के इर्द–गिर्द विकसित हरित पट्टी अब अपने आप में एक देखने योग्य स्थल बन चुका है। यहाँ कुछ वन्य प्राणी भी रखे गए हैं और यह सब मिलकर न सिर्फ ताज को सुरक्षित रखने में सहायक हो रहा है बल्कि ताज की खूबसूरती में भी चार चाँद लगा रहा है। एक अन्य उदाहरण उड़ीसा में कोणार्क मंदिर तथा पुरी के मंदिर का भी हमारे सामने है। समुद्र से आने वाली नमकीन हवा के प्रभाव से यह दोनों धरोहर धीरे–धीरे क्षरण के शिकार हो रहे हैं तथा कालान्तर में इसका प्रभाव पर्यटन उद्योग पर पड़ना निश्चित है। परन्तु सरकार ने समय रहते इस दिशा में कदम उठाया है तथा पुरातत्व विभाग के सहयोग से इन संरचनाओं में हुई क्षति को काफी हद तक सुधार लिया गया है। अभी हाल ही में आए यूनेस्कों के विशेषज्ञों ने कोणार्क मंदिर की वर्तमान स्थिति पर काफी संतोष व्यक्त किया है तथा इसके संरक्षण के लिए किए गए प्रयास को सराहा है। इसके विपरीत उत्तर प्रदेश के

ब्रजधाम की अवस्था काफी चिन्तादायक लगती है। मथुरा, वृन्दावन, गोकुल एवं गोवर्धन तथा इसके आस पास का हर हिस्सा धार्मिक एवं ऐतिहासिक दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण है। श्री कृष्णा के जन्म से लेकर यौवन तक के असंख्य लीलाओं एवं घटनाक्रमों का गवाह ब्रज प्रदेश भारत के पर्यटकों के लिए एक पसंदीदा स्थान है। परन्तु इन स्थानों पर आज भी यातायात, विश्रामालयों एवं होटलों का कारोबार असंगठित तौर पर चल रहा है। मंदिरों एवं ऐतिहासिक स्थलों का रख–रखाव ट्रस्ट के माध्यम से होता है। व्यवसाय को पूरी तरह कब्जे में रखे लोग अपने निहित स्वार्थ के वशीभूत पर्यटन उद्योग के विशेषज्ञ संगठनों को यहाँ पनपने नहीं दे रहे हैं। इसका सीधा सीधा दुष्प्रभाव पर्यटन व्यवसाय पर तो पड़ ही रहा है साथ ही साथ इतिहास की इन अमूल्य धरोहरों की स्थिति भी दिन प्रतिदिन बिगड़ती जा रही है। इस प्रकार संगठित पर्यटन उद्योग के विकास नहीं हो पाने का दुष्परिणाम यहाँ स्पष्ट तौर पर देखा जा सकता है।

पर्यटन उद्योग के मदद से ऐतिहासिक धरोहरों के संरक्षण का एक जीता जागता उदाहरण "हेरिटेज होटलों" के रूप में हमारे सामने आते हैं। आजादी के पहले भारत में अत्यन्त छोटे–छोटे राजघराने तथा नवाबों का अपना हुकूमत था, जो कि 15 अगस्त 1947 के पश्चात एक होकर संघीय गणराज्य भारत कहलाया। इसके साथ ही यहाँ के शासन व्यवस्था में परिवर्तन आया तथा रियासतों की सत्ता उनके मालिकों के हाथ से निकल कर राज्य एवं केन्द्र सरकार में आ गई। इसके परिणाम स्वरूप पुराने राजा एवं नवाब लोगों की आर्थिक स्थिति निरन्तर दयनीय होती गई तथा अपनी हवेली एवं किला का देखभाल करना भी उनके वश में नहीं रहा। इस प्रकार पूरे भारत में बिखरे हजारों किला एवं हवेली धीरे–धीरे खंडहर में बदलने लगे। सर्वाधिक बुरा हाल राजस्थान का हुआ, जो किला एवं हवेलियों के लिए जाना जाता था। बदली हुई परिस्थिति का नब्ज सबसे पहले जयपुर के महाराजा ने समझा और अत्याधिक विरोध के बावजूद अपने राम बाग पैलेस को होटल में परिवर्तित किया। इस होटल का प्रबन्धन सन् 1972 में ताज ग्रुप के हाथों आया। इस प्रकार जयपुर ने सबसे पहले हिन्दुस्तान में हेरिटेज होटल का सूत्र पात किया। इसके बाद शीघ्र ही उदयपुर के राजा ने जग निवास पैलेस को होटल में परिवर्तित किया तथा इसका भी प्रबन्धन ताज ग्रुप को सौंपा गया। इस महत्वपूर्ण फैसले ने राम बाग पैलेस तथा जग निवास पैलेस की दशा ही सुधार दी। पर्यटकों को आरामदायक निवास के लिए इन महलों को सुरूचिपूर्ण तरीके से सजाया गया तथा इस दौरान यह भी हमेशा ध्यान में रखा गया कि परम्परागत राजस्थानी शैली को कोई आँच न आने पाए। वस्तुतः विदेशी पर्यटकों के बीच भारत की पहचान महाराजाओं के देश के रूप में रही है। अतः प्राचीन शैली तथा आधुनिक सुविधा की उचित सम्मिश्रण एक चुनौती रहा है, जिसे पर्यटन उद्योग ने इन हेरिटेज होटलों में बखूबी स्वीकार किया है। जयपुर एवं उदयपुर के अनूठे प्रयोग के पश्चात

अन्य स्थानों पर भी पुराने महलों, हवेलियों, शिकार गृहों एवं जल महलों को पर्यटन उद्योग को सौंपने एवं होटलों में परिवर्तित करने की होड़ सी लग गई तथा इसमें अग्रणी भूमिका राजस्थान की रही। इससे न सिर्फ इन ऐतिहासिक स्थानों की सुरक्षा हुई बल्कि इनके मालिकों को अर्थोपार्जन का सुयोग भी मिला तथा इससे पर्यटन उद्योग भी लाभान्वित हुआ। हेरिटेज होटल शीघ्र ही विदेशी पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र बन गया क्योंकि कुछ दिनों के लिए ही सही राजसी ठाट–बाट से महलों में रहने का अनुभव यूरोप से आए सैलानियों के लिए अविस्मरणीय था।

पर्यटन विभाग ने विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ एवं छूट देकर इन होटलों को व्यवस्थित होने में काफी मदद की है। इन होटलों से कमाई गई विदेशी मुद्रा का 50 प्रतिशत आयकर मुक्त होता है तथा शेष 50 प्रशित पर भी कोई कर नहीं लगता यदि उसका निवेश पुनः होटलों में कर दिया जाए। पूँजी देने वाले वित्तीय संस्था अपने ऋण पर 20 प्रतिशत से 50 प्रतिशत तक का ब्याज माफ कर देते बशर्ते कि इन हेरिटेज होटलों का कारोबार संतोषप्रद हो। इसके अतिरिक्त विशेष व्यवस्था के तहत ऋण पर आकर्षक सबसीडी भी दिया जाता है। अच्छा व्यापार करने वाले हेरिटेज होटल को विदेशी सामान आयात करने पर कर में राहत दी जाती है। इस प्रकार सरकार के द्वारा भी हेरिटेज होटल के विकास के लिए भरपूर सहायता दी जाती है तथा इसका स्पष्ट प्रभाव इन हवेलियों के वर्तमान अच्छे अवस्था के रूप में देखा जा सकता है। इसके विपरीत कुछ ऐसी हवेली जो रूढ़ीवादी विचारों से अपने को मुक्त नहीं कर पाई हैं, आज खस्ता हाल है। बनारस का रामनगर हवेली इसका ज्वलंत उदाहरण है।

भारत के कुछ प्रमुख हेरिटेज होटल

1. ***बाल समन्द पैलेस :*** यह पैलेस होटल राजस्थान के जोधपुर जिले में स्थित है। लाल पत्थर से बनी यह इमारत राजपूत स्थापत्य कला की अनूठी निशानी है। यह संरचना बाल समन्द झील के किनारे बना है। बाल समन्द झील तेरहवीं शताब्दी में बनवाया गया था तथा इस स्थान का उपयोग राजपूत राजा अपनी छुट्टियाँ बिताने के लिए करते थे। होटल में परिवर्तित होने के बाद यह हवेली अब पुनः अपनी सुन्दरता से लोगों का मन मोह रही है।

2. ***लालगढ़ पैलेस :*** बीकानेर जिले में स्थित इस इमारत का निर्माण सन् 1902 में महाराजा गंगा सिंह जी ने किया था। महल का भव्य बनावट रेगिस्तान की कठिन परिस्थिति का परिचायक होने के साथ–साथ पत्थर के अनूठे तराश के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यह महल भी आज अति आकर्षक स्वरूप में पर्यटकों को राजसी ठाठ का अनुभव देता है। सुविधाजनक कमरों के अतिरिक्त तंरण ताल, टेनिस कोर्ट एवं भारतीय, चीनी एवं यूरोपीय व्यंजन की भी व्यवस्था पाई जाती है।

3. ***उम्मेद भवन पैलेस :*** राजस्थान के जोधपुर जिले में स्थित यह महल आधुनिक युग का सम्भवतः विश्व का सबसे बड़ा निजि आवास है। इस भवन का निर्माण कार्य सन् 1929 में शुरू हुआ तथा सन् 1943 में पूर्ण हुआ। लगभग 5000 कारीगरों के 14 वर्ष के परिश्रम का फल उम्मेद भवन के रूप में आज सबके सामने है। भारतीय एवं ब्रिटिश शैली का सम्मिश्रण यह भवन भी होटल के रूप में परिवर्तित हो चुका है और विदेशी सैलानियों के लिए यहाँ रहना एवं इसे देखना एक विस्मरणीय अनुभव है।

4. ***सरदार समन्द पैलेस :*** पाली जिले में स्थित इस महल का निर्माण जोधपुर के महाराजा उम्मेद सिंह ने सन् 1933 में करवाया था। इस भवन का उपयोग राजपरिवार आखेट गृह के रूप में करते थे। होटल में परिवर्तित करते समय इस महल की मौलिक शैली को संरक्षित रखने पर विशेष ध्यान दिया गया। चारो तरफ हरियाली है तथा मोर सहित अन्य पक्षियों का उन्मुक्त विचरण देखने योग्य है। यहाँ आने वाले सैलानी आसपास के गाँवों का भ्रमण कर राजस्थान की मौलिक जीवन शैली की झलक लेना नहीं भूलते हैं।

5. ***महारानी बाग :*** पाली जिले के सादड़ी कस्बे में स्थित यह अति खूबसूरत संरचना का निर्माण उन्नीसवीं शताब्दी में राजपूताना की महारानी ने करवाया था। अपेक्षाकृत शुल्क माने जाने वाले राजस्थान में इस स्थल को इसकी हरितिमा के लिए जाना जाता है। जोधपुर, उदयपुर तथा माउन्ट आबू से लगभग समान दूरी पर स्थित इस स्थल का उपयोग महाराजा एवं उनके परिवार के सदस्य थकान मिटाने एवं स्वास्थ्य लाभ के लिए करते थे। इस प्रकार यह प्राचीन काल का "प्रकृति पर्यटन स्थल" रहा है। अरावली श्रृंखला से घिरा महारानी बाग आज पर्यटन उद्योग के सहयोग से न सिर्फ फल–फूल रहा है बल्कि यह सैलानियों के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। नजदीक में ही स्थित रणकपुर मंदिर एवं कुम्भलगढ़ किला इस स्थान का महत्व और भी बढ़ा देता है।

6. ***कॉनाट हाउस :*** माउन्ट आबू में स्थित यह बंगला ब्रिटिश शैली का जीता–जागता उदारण है। इसका उपयोग मारवाड़ के प्रशासक ग्रीष्म आवास के रूप में करते थे। जर्जर हो रही इस इमारत को प्रसिद्ध होटल ग्रुप ने अधिग्रहित किया तथा आज यह माउन्ट आबू का मशहूर विश्राम स्थल है।

7. ***रावलकोट होटल :*** जैसलमेर जिले में स्थित यह भवन शहर से थोड़ी दूर स्थित है। ऊँचे टाले पर बने इस ईमारत को देखकर राजस्थान की स्थापत्य शैली की विविधता का सहज ही आभास हो जाता है। इस भवन से पूरे जैसलमेर शहर की छटा को देखा जा सकता है। होटल में तब्दील इस भवन के प्रत्येक कमरे में सिर्फ राजस्थानी शैली के वस्तुओं का ही प्रयोग किया गया है।

8. ***खीमसर किला :*** राजस्थान के ही नागौर जिले में स्थित यह किला ग्यारह एकड़ क्षेत्रफल में फैला हुआ है। थार मरूभूमि के किनारे बने इस किले के मौलिक वास्तुशिल्प को सुरक्षित रखते हुए इसे होटल में परिवर्तित किया गया है। तरण–ताल एवं स्वास्थ्य क्लब के साथ यहाँ परम्परागत राजस्थानी खाने का मजा लिया जा सकता है।

9. ***तारागढ़ पैलेस :*** हिमाचल प्रदेश के कांगड़ा जिले में स्थित यह महल लगभग 1000 मीटर की ऊँचाई पर स्थित है। धौलाधर पहाड़ की तराई में बना यह खूबसूरत इमारत चारो ओर से चाय के बगान से घिरा हुआ है। आज हेरिटेज होटल का दर्जा प्राप्त यह संरचना सैलानियों को प्रकृति पर्यटन का अनूठा अवसर देता है। आज जहाँ पारम्परिक हिल स्टेशन जैसे शिमला, मसूरी एवं नैनीताल अत्याधिक भीड़–भाड़ के कारण अपना आकर्षण खोता जा रहा है वहीं साहसी पर्यटकों के लिए यह स्थान देखने योग्य है।

10. ***नालागढ़ किला :*** हिमाचल प्रदेश के ही सोलन जिले में स्थित इस भव्य किले का निर्माण सन् 1421 में राजा विक्रम चन्द ने करवाया था। मध्य प्रदेश के बुन्देलखंड क्षेत्र में चन्देरी नामक रियासत के इस राजपूत शासक ने हिमालय की तराई में एक छोटी पहाड़ी के ऊपर इस किले का निर्माण ग्रीष्म ऋतु में मध्य भारत की तपती मौसम से बचने के उद्देश्य से करवाया था। भारत के एक प्रमुख होटल उद्योग ने इसका अधिग्रहण किया तथा यहाँ अत्याधुनिक सुविधाओं की व्यवस्था की। कभी अपनी दुर्दशा पर रोता यह किला आज शान से पर्यटकों को आमन्त्रण दे रहा है। यहाँ टेनिस कोर्ट, गोल्फ–ग्राउण्ड, व्यायाम शाला, सम्मेलन कक्ष एवं अत्याधुनिक भोजनालय है। इन सारी आधुनिक सुविधाओं का इन्तजाम करते समय किले की मौलिक शैली को संरक्षित रखने पर विशेष बल दिया गया है।

11. ***नूर–उस–सबा महल :*** मध्य प्रदेश के भोपाल जिले का यह सर्वाधिक आलिशान निजी निवास स्थान रहा है। इसका निर्माण सन् 1920 में नवाब हमीदउल्ला खाँ की पुत्री के आवास के लिए किया गया था। भोपाल झील के समीप बने इस महल का रख–रखाव स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद मुश्किल हो रहा था। इस महल को भी हेरिटेज होटल में परिवर्तित किया गया और तब से यह अपनी खोई रंगत को पुनः पाकर पर्यटकों को आकर्षित कर रहा है।

पर्यटन एवं सांस्कृतिक पारिस्थितिकी तन्त्र

पिछले कुछ दशकों में पर्यावरण शब्द का अर्थ काफी व्यापक हो गया है। आज मात्र जल, वायु, मिट्टी अथवा जीव जन्तु ही पर्यावरण में नहीं आते बल्कि स्थान विशेष की संस्कृति भी वहाँ के पर्यावरण का एक हिस्सा माना जाता है। सामान्य तौर पर ऐसा देखा गया है कि अपसंस्कृति किसी भी क्षेत्र के समाजिक–आर्थिक अवस्था को प्रतिकूल प्रकार से प्रभावित करता है और कालान्तर में इसका दुष्प्रभाव वहाँ की प्राकृतिक सम्पदा पर भी पड़ता है। पर्यटन उद्योग के बदलते स्वरूप में संस्कृति का महत्व काफी बढ़ गया है। आज सांस्कृतिक पर्यटन काफी बड़ा आकर्षण बना हुआ है। इस प्रकार पर्यटन व्यवसाय से जुड़े व्यक्ति एवं संस्था भारत की बहुरंगी संस्कृति को न सिर्फ संरक्षण प्रदान कर रहे हैं बल्कि कुछ–कुछ स्थानों पर उन्हें पुनर्जीवित करने का सफल प्रयास भी कर रहे हैं। भारत में ऐसे सैकड़ो उदाहरण बिखरे पड़े हैं, जहाँ पर्यटन व्यवसाय के प्रत्यक्ष तथा परोक्ष परिश्रम से संस्कृति को काफी सम्बल प्राप्त हुआ है। कोणार्क तथा खजुराहों का नृत्य समारोह इस दिशा में किया गया एक अनुकरणीय प्रयोग है। कोणार्क का सूर्य मंदिर प्राचीन काल से ही "ब्लैक पैगोडा" के नाम से विख्यात रहा है और नाविक इसका उपयोग भारतीय तट के दिशा निर्धारण के लिए करते थे। सूर्य को समर्पित यह मंदिर रथ के आकार का है जिसे सात घोड़े खींचते हुए दर्शाए गए हैं। प्रतिवर्ष फरवरी के महीने में सम्पन्न होने वाले नृत्य महोत्सव में विभिन्न शैलियों के अग्रणी नृत्यकार यहाँ अपनी कला का प्रदर्शन करते हैं। इसी प्रकार मध्य–प्रदेश के खजुराहो नृत्य समारोह भी देशी–विदेशी पर्यटकों के बीच काफी मशहूर रहा है। साठ तथा सत्तर के दशक में पाश्चात्य नृत्य शैली का जुनून हमारी युवा पीढ़ी पर सर चढ़ कर बोल रहा था। पर्यटन विभाग द्वारा आयोजित नृत्य समारोहों में अधिकांश उच्चवर्गीय लोग ही जाया करते थे और इसका असर इस वर्ग के नौवजवानों पर देखा जा सकता है। ओडिसी एवं भरतनाट्यम नृत्य शैली एक बार पुनः प्रचलित होने लगा और आज महानगरों के युवक–युवतियाँ इन नृत्यों को सीखने में लगे हुए हैं। पर्यटन विभाग के विभिन्न समारोहों तथा पाँच सितारा होटलों में लोक नृत्य और लोक संगीत का कार्यक्रम आज एक अनिवार्यता का रूप ले चुका है। इसके परिणामस्वरूप रॉक–एन–रॉल तथा डिस्को से प्रभावित युवा–पीढ़ी एक बार फिर से राजस्थान के कालबेलिया नृत्य, गुजरात के गरबा एवं दांडिया, पंजाब का गिद्धा एवं भांगड़ा तथा झारखण्ड का छऊ एवं झूमर के प्रति मुड़ गए हैं। इस प्रकार इन लोक नृत्यों एवं लोक संगीतों को पुनर्जीवित करने में पर्यटन उद्योग का काफी योगदान रहा है। राजस्थान के उदयपुर एवं शेखावटी का प्रसिद्ध कठपुतली नृत्य लुप्तप्राय हो चला था। राजस्थान पर्यटन ने देशी–विदेशी सैलानियों के मनोरंजन के लिए कठपुतली नृत्य का आयोजन करना प्रारम्भ किया। इसके परिणामस्वरूप स्थानीय लोगों की भी रूचि इस प्राचीन कला

के प्रति बढ़ी तथा इसके पुनः प्रचलित होने की सम्भावना काफी बलवति हो गई है। पिछले कुछ वर्षों से पर्यटन उद्योग अपने नित नवीन तथा अनूठे प्रयोगों से न सिर्फ पर्यटकों को आकर्षित करने में लगे हुए हैं। पिछले दिनों दिल्ली एवं जयपुर के कुछ पाँच सितारा होटल दशहरा के दौरान अपने प्रांगण में रावण दहन का आयोजन किया। एक निश्चित शुल्क की अदायगी के पश्चात पर्यटक इन होटलों के सुस्वादु भोजन का आनन्द लेते हुए आतिशबाजी एवं रावण दहन का पोग्राम भी देखने आए। विदेशी पर्यटकों को संक्षेप में रावण दहन से संबंधित जानकारी दी गई। समय–समय पर होने वाले इन आयोजनों से पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित युवा पीढ़ी के बीच भारतीय संस्कृति पुनः प्रचलित हो सकता है। पर्यटन उद्योग द्वारा आयोजित हस्तशिल्प मेला एवं व्यंजन मेला भी भारतीय संस्कृति के बहुरंगी एवं बहुआयामी पक्ष को प्रचारित–प्रसारित करने में सक्षम रहा है।

सूरजकुण्ड शिल्प मेला

हस्तशिल्प किसी भी क्षेत्र, प्रदेश अथवा देश का एक महत्वपूर्ण संस्कृतिक धरोहर होता है। शिल्प कला वास्तव में क्षेत्र विशेष का परिचय देने का एक अत्यन्त ही सक्षम माध्यम है। पिछले कुछ दशकों में पश्चिमी उपभोगवाद की बढ़ती लहर तथा आर्थिक जगत में आई खुलेपन एवं भुमंडलीकरण के प्रभाव में आकर पारम्परिक शिल्प कला को काफी क्षति हुई है। इस अवस्था का संकेत पर्यटन उद्योग को काफी पहले मिल गया और इस शिल्प कला को बचाने के लिए समय–समय पर प्रभावी कदम भी उठाए जाते रहे हैं। समुचित प्रचार से भारत के विभिन्न क्षेत्रों में पाई जाने वाली मौलिक शिल्प कला को विदेशी पर्यटकों के बीच लोकप्रिय बनाया गया। इसका सीधा प्रभाव भारत के प्रमुख दर्शनीय स्थलों के इर्द–गिर्द बसे शिल्प बाजार तथा वहाँ होने वाली खरीद–बिक्री के रूप में देखा जा सकता है। इससे न सिर्फ कारीगरों की आर्थिक दशा में सुधार आया बल्कि लुप्त होती शिल्प कला को नया जीवन दान भी मिला। पर्यटन विभाग के द्वारा इस दिशा में किया गया सर्वाधिक मौलिक प्रयोग सूरजकुण्ड शिल्प मेला है जो निरन्तर प्रसिद्धि की नई बुलंदियों को पार कर रहा है।

दक्षिण दिल्ली से करीब 8 कि०मी० की दूरी पर एक अत्यन्त ही खूबसूरत झील है। कहा जाता है कि तोमर शासक राजा सूरज पाल ने इस झील का तथा उसके किराने एक सूर्य मंदिर का निर्माण 10वीं शताब्दी में करवाया। आज सूरजकुण्ड प्रतिवर्ष लगने वाले शिल्प मेला के लिए ज्यादा मशहूर है। हरियाणा पर्यटन विकास निगम तथा केन्द्रीय पर्यटन विभाग के मिले–जुले प्रयास से प्रतिवर्ष 1 से 15 फरवरी तक विशुद्ध ग्रामीण परिवेश में यहाँ शिल्प मेला लगता है। भार के सभी राज्यों से शिल्पकार यहाँ आते हैं ओर सबके सामने अपनी विशिष्ठ कलाकृतियाँ बनाते हैं। देश–विदेश के पर्यटक भी यहाँ काफी अधिक संख्या में आकर न सिर्फ मौलिक शिल्प का सृजन

देखते हैं बल्कि उनकी खरीददारी भी करते हैं। चूँकि इस सारे प्रक्रिया में कोई बिचौलिया नहीं होता है अतः पर्यटकों को उचित दाम पर वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं और शिल्पकारों का अपेक्षाकृत अधिक आर्थिक लाभ प्राप्त होता है। हथकरघा के कपड़े, बंधेज कपड़े, कलमकारी, टेराकोटा के बर्तन, लकड़ी पर उकेरे गए चित्र आदि सूरजकुण्ड मेले के मुख्य आकर्षण हैं। प्रत्येक वर्ष बढ़ती भीड़ को आधार मानते हुए शिल्प कला के प्रचार–प्रसार में सूरजकुण्ड मेले का योगदान अविस्मरणीय है।

शिल्प ग्राम

पर्यटन उद्योग के द्वारा चलाया जाने वालाल अन्य अनूठा प्रयोग उदयपुर का शिल्पग्राम है। उदयपुर शहर के बाहर ग्रामीण वातावरण में एक कृत्रिम गाँव बसाया गया है। इस गाँव में भारत के विभिन्न राज्यों में पाए जाने वाले अलग–अलग शैलियों में बना झोपड़ी है। भारत के गाँवों में किसानी, लोहार, बढ़ई, बुनकर, कुम्हार इत्यादि विभिन्न व्यवसाय के लोग मिलजुल कर रहते हैं। अलग–अलग विधाओं में निपुण इन लोगों की जीवनशैली में भिन्नता है। परन्तु सब मिलकर एक अत्यन्त ही सजीव एवं रोचक ग्राम का निर्माण करते हुए विभिन्न व्यवसाय के लोग विभिन्नता में एकता की जीवन्त मिसाल है। कुछ इसी भावना को संजोने के लिए राजस्थान पर्यटन नें शिल्पग्राम की रचना की है। इस शिल्पग्राम में राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा इत्यादि प्रदेशों के विभिन्न क्षेत्रीय शैली के मौलिक झोपड़ियाँ हैं जो विभिन्न व्यवसाय के लोगों की जीवनशैली को उजागर करती है। राजस्थानी शैली की झोपडियों में मुख्य प्रतिनिधित्व मारवाड़ के बुनकर, मेवाड़ के कुम्हार तथ कोटा क्षेत्र के आदिवासी किसान सहरिया शैली करते हैं। इसी प्रकर से गुजरात के रबारी, हरिजन, भुजोड़ी ओर मलधार समुदाय की मौलिक शैली में झोपड़ियाँ बनाई गई हैं। इसी प्रकार महाराष्ट्र के कोल्हापुर एवं रागढ़ तथा गोवा के खुम्बा एवं बिचोलिम के अनूठे शैली की झोपड़ियाँ भी हैं। प्रत्यके झोपड़ी में उनके विशिष्ट समुदाय के द्वारा प्रयोग में लाई जाने वाली वस्तुएँ रखी गई हैं। यह शिल्प ग्राम पर्यटकों के बीच काफी मशहूर है तथा इस प्रयोग से ग्रामीण शैली एवं संस्कृति की जानकारी सभी को मिलती है। कंक्रीट के बढ़ते जंगल में पर्यटन उद्योग के इस प्रयास से हमारे देश की प्राचीन जीवन शैली को बचाए रखने में सफलता प्राप्त हुई है।

संग्रहालय

संग्रहालय एवं अजायबघर आज एक प्रमुख पर्यटन आकर्षण के रूप में उभरकर सामने आया है। किसी भी स्थान विशेष पर आने वाला पर्यटक वहाँ के संग्रहालय अवश्य देखना चाहता है। इससे न सिर्फ उस क्षेत्र विशेष के इतिहास का बल्कि वहाँ की संस्कृति का भी दर्शन एक ही जगह

पर हो जाता है। कुछ संग्रहालयों में दृश्य–श्रव्य माध्यमों से छोटे–मोटे प्रोग्राम दिये जाते हैं जिससे सैलानियों को भारत की असली छवि का दर्शन होता है। इन संग्रहालयों में भारत की अनूठी संस्कृति के प्रतीक वैज्ञानिक तरीके से संजो कर रखे गए हैं। इनके द्वारा निकाले गए प्रकाशनों से भी विशिष्ट स्थानों की संस्कृति झलकी हमें प्राप्त होती है।

वैसे तो भारत के लगभग हर छोटे–बड़े शहर में संग्रहालय देखा जा सकता है परन्तु भारत की कुछ विशिष्ट संग्रहालयों में राष्ट्रीय शिल्प संग्रहालय नई दिल्ली, राष्ट्रीय संग्रहालय नई दिल्ली, संस्कृति संग्रहालय नई दिल्ली, केलकर संग्रहालय पुणे, विशाल संग्रहालय अहमदाबाद, भारत भवन भोपाल, भारत कला भवन वाराणसी, आशुतोष संग्रहालय कलकत्ता इत्यादि विख्यात है।

प्रगति मैदान में पुराने किले के बगल में स्थित शिल्प संग्रहालय में मिट्टी, लकड़ी, धातु, बाँस इत्यादि से बने विभिन्न क्षेत्र के हजारों वस्तुएँ रखी गई है। ग्रामीण भारत को दर्शाने के लिए प्रत्येक राज्य की अलग शैली में बनी प्रतिनिधि झोपड़ियाँ हैं। हर झोपड़ी में वहाँ की मौलिक वस्तुएँ ही लगाई गई हैं। चित्रकला की अलग–अलग प्रथा को प्रदर्शित करने के लिए एक अगल दीर्ध है। यहाँ ग्रामीणों के द्वारा उपयुक्त प्राकृतिक वस्तुओं से बना चित्र रखा गया है। एक अन्य दीर्ध में कढ़ाई, बुनाई, धातु का कार्य, मिट्टी के बर्तन, बाँस के वस्तु इत्यादि को बनाने की क्रिया का सजीव प्रदर्शन किया जाता है। इस प्रकार कलकत्ता के आशुतोष संग्रहालय में रखे गए कलाकृतियों से भारत के पूर्वी क्षेत्र की संस्कृति की सम्पूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। इस संग्रहालय में बंगाल के बुद्धिजीवियों एवं छोटे रियासत के राजाओं ने अपनी व्यक्तिगत संग्रह से मूर्तियाँ दान की हैं। इसके अतिरिक्त बंगला तथा उड़ीसा में एक समय काफी प्रचालित रह चुका पटचित्र एवं गोलाकार ताश का अनमोल संग्रह है। अहमदाबाद मात्र 13 वर्ष पुराना एक संग्रहालय है जिसका निर्माण सुरेन्द्र पटेल ने करवाया था। इस संग्रहालय में भारत के विभिन्न क्षेत्रों में काम में लाया जाने वाला बर्तन रखा गया है। मिट्टी, तांबा, पीतल, चांदी एंव अन्य धातुओं से बना विभिन्न आकार प्रकार का करीब 10,000 बर्तन यहाँ रखा गया है। यह अपने तरह का सम्भवतः विश्व का अकेला संग्रहालय है।

पर्यटन विभाग के द्वारा संचालित एवं प्रायोजित संग्रहालय भारत की सांस्कृतिक वैभव को सुरक्षित रखने में काफी महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। पर्यटन उद्योग निश्चित तौर पर आम लोगों की मानसिकता को बदलनें में सफल हुआ है। इसका स्पष्ट उदाहरण महानगरों के ड्राईंग रूम में देखा जा सकता है जहाँ गुजरात एवं मधुबनी पेंटिंग, मिट्टी के बर्तन तथा धातुओं के बर्तन साज–सज्जा की वस्तुओं में अग्रणी स्थान ले चुका है।

धार्मिक एवं सांस्कृतिक मेले

तीज–त्योहार और मेले भारतीय संस्कृति के अभिन्न अंग है। सच तो यह है कि इन मेलों में बिना भारत की पहचान ही अधूरी है। विदेशी पर्यटकों के बीच धार्मिक एंव सांस्कृतिक मेलों के प्रति काफी आकर्षण रहा है और भारत आने वाला हर सैलानी समयानुसार इनमें हिस्सा अवश्य लेना चाहता है। ऐसे मेले पारम्परिक वेश–भूषा, खान–पान एवं दैनिक उपयोग में आने वाली वस्तुओं के प्रदर्शन और व्यापार का एक प्रमुख माध्यम है। पर्यटन विकास मे सफलता पूर्वक किया है।

पर्यटन विभाग के द्वारा आयोजित सांस्कृतिक मेलों की सूची काफी लम्बी है। परन्तु अहमदाबाद में आयोजित होने वाला पतंग उत्सव, राजस्थान का मरू मेला, लद्दाख का सिंधु दर्शन, बिहार का राजगीर महोत्सव इत्यादि काफी महत्वपूर्ण है। अहमदाबाद का पतंग उत्सव प्रत्येक वर्ष 14 जनवरी अर्थात मकर संक्रान्ति के दिन मनाया जाता है। इस मेले के आयोजन में गुजरात पर्यटन विभाग का काफी महत्वपूर्ण योगदान रहा है। वैसे तो पतंग उड़ाने की शुरूआत मध्यकालीन समाज में हो चुकी थी परन्तु धीरे–धीरे यह राजे–रजवाड़ों का महत्वपूर्ण मनोरंजन बनती गयी। भारत के साथ–साथ विदेशों में भी पतंगबाजी की प्रथा पाई जाती है। पतंग बनाना एक विकसित कला रहा है तथा पतंगों के विभिन्न आकार एंव आकृति देखने की चीज रही है। पिछले पाँच–छः दशकों में पश्चिमी संस्कृति के प्रभाव में आकर फिल्म, रेडियो और अब टी०वी० ही मनोरंजन का साधन उपलब्ध है और प्राचीन खेल एवं उससे जुड़े कला और रोमांच धीरे–धीरे लुप्त होते जा रहे हैं। परन्तु अहमदाबाद का पतंग उत्सव इसे पुनजीर्वित करने में काफी सहायक रहा है। भारत के कोने–कोने से प्रतिवर्ष काफी बड़ी संख्या में पतंगबाज यहाँ इकट्ठे होते हैं। पिछले कुछ वर्षों में थाईलैण्ड, मलेशिया, कनाडा एवं अमेरीका के भी शौकीन पतंगबाजों ने इस महोत्सव में बढ़–चढ़ कर हिस्सा लिया। रंग बिरंगी विभिन्न आकृतियों वाले पतंग का बनना पुनः प्रारम्भ हुआ तथा इससे इस लुप्तप्राय कला को नया जीवन दान मिला है। पंतग मेले के दौरान दर्शकों और प्रतियोगियों के लिए मौलिक गुजराती व्यंजनों का स्टॉल लगाया जाता है तथा गरबा एवं डांडिया जैसे गुजराती नृत्य संगीत का आयोजन किया जाता है। इस प्रकार लोक संगीत एवं नैसर्गिक पाक कला का भी झलक इस त्योहार के द्वारा लोगों को दी जाती है। इस प्रकार पर्यटन विभाग के द्वारा आयोजित पतंग महोत्सव निश्चित तौर पर गुजराती संस्कृति को काफी बढ़ावा दे रहा है।

मणिपुर में अपने समय का एक बहुत ही प्रचलित पारम्परिक उत्सव है "हेक्रू हितोंग्बा"। पश्चिमी सभ्यता के दुष्प्रभाव से यह उत्सव धीरे–धीरे वहाँ के मूल निवासियों के द्वारा भुला दिया गया था। परन्तु पर्यटन विभाग के प्रयास से यह पुनः प्रचलित हो रहा है। प्रतिवर्ष सितम्बर के महीने

में मनाया जाने वाला यह परम्परा एवं धर्म का एक जीता जागता उदाहरण है। ऐसी मान्यता है कि अटठारहवीं शताब्दी में इस उत्सव का शुभारम्भ नौका दौड़ के रूप में राजर्षी भाग्यचन्द्र ने की थी। उन्होंने श्री विजय गोविन्द एंव श्री गोविन्द मंदिरों की स्थापना की। थंगपट नामक स्थान से एक शोभायात्रा निकाली जाती है। इसके पश्चात प्रतियोगियों की दो टोलियाँ पारम्परिक पोशाक "खम्बा" में सजकर फूल तथा आँवला के फल से पारम्परिक मणिपुरी देवता का आह्वान करते हैं। इस रस्म को "हेरूक करपा" कहते हैं। इसके पश्चात नौका दौड़ होता है। पर्यटन विभाग के द्वारा आयोजित इस उत्सव में काफी संख्या में पर्यटक भाग लेते हैं। इस प्रकार एक लुप्त परम्परा को पुनजीवित करने में पर्यटन उद्योग ने सराहनीय भूमिका निभाई है।

इसी कड़ी में एक अन्य उल्लेखनीय नाम राजस्थान का पुस्कर मेला है। अजमेर के निकट पुष्कर झील के पास प्रतिवर्ष लगने वाला यह मेला देश–विदेश के पर्यटकों के लिए आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। पुष्कर भारत का एकमात्र ऐसा स्थान है जहाँ ब्रहमा का मंदिर है। यहाँ के मेले में सभी प्रकार के पशुओं की खरीद बिक्री होती है। इसके अतिरिक्त देश के विभिन्न हिस्सों में प्रसिद्ध हस्तशिल्प भी यहाँ का प्रमुख आकर्षण है। यहाँ आने वाले सैलानियों के लिए ऊँट की सवारी भी उपलब्ध है। हस्तशिल्प के व्यापार के साथ–साथ यहाँ शाम को होने वाले राजस्थानी नृत्य–संगीत का कार्यक्रम भी अनूठा होता है तथा इससे स्थानीय कलाकारों को अपनी कला को प्रदर्शित करने का मंच मिल जाता है। पर्यटन विभाग के सहयोग से आयोजित इस मेले ने राजस्थान के लोक नृत्य एवं गीत को अग्रिम पंक्ति में ला खड़ा किया है। इसी प्रकार राजस्थान के रेगिस्तानी इलाके जैसलमेर में भी प्रतिवर्ष मरू मेले का आयोजन होता है। राजस्थान की लोक संस्कृति जैसे कालबेलिया नृत्य, घूमर नृत्य एवं मांड गायन इस मरू मेले का मुख्य अंग होता है। पर्यटन विभाग ने इस मेले को काफी सुनियोजित तरीके से प्रचारित किया, जिसके परिणाम स्वरूप यह मेला आज विदेशी पर्यटकों से भरा रहता है। इसका स्पष्ट प्रभाव राजस्थान के लोक संगीत के प्रसार के रूप में हमारे सामाने है। आज लोक कलाकारों का कैसेट हर क्षेत्र में उपलब्ध है तथा यह संगीत प्रेमियों के द्वारा सराहा जा रहा है। पश्चिम बंगाल के शांति निकेतन में भी प्रतिवर्ष बसन्तोत्सव का आयोजन बसन्त ऋतु में होता है। यह उत्सव भी पर्यटकों के लिए एक सुखद अनुभव होता है तथा प्रदेश का पर्यटन विभाग इसे बड़ी कुशलता पूर्वक लोगों के सामने प्रस्तुत कर रहा है। गुरूदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने जब बोलपुर के शांत एवं नीख वातावरण में इस विश्वविद्यालय की स्थापना की तब उनके मन में निश्चय ही प्रकृति की गोद में बंगाल की संस्कृति को जीवित रखने की अभिलाषा होगी। आज भी जब यहाँ बसंतोत्सव मनाया जाता है तो विशुद्ध बंग संस्कृति का परिचय यहाँ आने वाले सैलानियों को मिलता है। विभिन्न प्राकृतिक वस्तुओं जैसे फूल एवं पत्तों से

रंग तैयार कर होली खेली जाती है। शाम को पूरा वातावरण रवीन्द्र संगीत एवं लोक नृत्य से जीवन्त हो उठता है। इस प्रकार यह उत्सव भी आधुनिकता की ओर अग्रसर युवा पीढ़ी को बंग संस्कृति की याद दिलाती है।

मधुबनी चित्रकला

पर्यटन उद्योग के सहयोग से एक लुप्त होती पारम्परिक कला के पुनः जीवित होने का एक अत्यन्त ही महत्वपूर्ण उदाहरण मधुबनी चित्रकला है। बिहार का एक महत्वपूर्ण क्षेत्र है मिथिला जो हिमालय की तराई में स्थित है। मधुबनी, दरभंगा, सीतामढ़ी, मुजफ्फरपुर, सहरसा, पूर्णिया, भागलपुर इत्यादि जिले मिथिलांचल में आते हैं। मिथिलांचल का एक अत्यन्त मौलिक चित्रकला की शैली है जिसे लोग मधुबनी शैली के नाम से जानते हैं। तुलसीदास ने रामचरित मानस में वर्णन किया है कि बिहार का मिथिलांचल जो सीता जी का पैतृक निवास स्थान था, उनकी अयोध्यापति राम से शादी के समय अत्यन्त ही सुरूचिपूर्ण तरीके से सजाया गया था। मिथिला के प्रत्येक घर की दीवारों को महिलाओं ने विशिष्ट शैली में चित्रकारी के द्वारा अलंकृत किया था। यह इस बात का प्रमाण है कि मधुबनी चित्रकला एक अति प्राचीन शैली है। इस शैली की विशेषता यह है कि इसे सिर्फ महिलाएँ ही आंकती है तथा पीढ़ी दर पीढ़ी यह कला माता से बेटियाँ सीखती हैं। शादी के एक रस्म के रूप में दीवारों पर विशिष्ठ चित्रांकन किया जाता है, जिसे "कोहबर" कहा जाता है। कृष्णा एवं उनका रासलीला भी मधुबनी शैली में विशेष रूप से अंकित किया जाता है। इसके अतिरिक्त शिव–पार्वती, लक्ष्मी, काली एवं दुर्गा इत्यादि देवी–देवताओं की आकृति भी मिथिलांचल के चित्रकला की विशेषता है। प्रकृति के विभिन्न घटक जैसे पेड़–पौधे, जीव–जन्तु इत्यादि भी चित्र कला में अपना स्थान पाते हैं। इस प्रकार इस चित्र शैली के द्वारा मिथिला वासी का प्रकृति प्रेम प्रदर्शित होता है। मधुबनी चित्रकला की दूसरी विशेषता इसमें प्रयुक्त रंग होता है। रंग हमेशा प्राकृति स्त्रोत से ही प्राप्त किया जाता है। जैसे पलाश के फूल, नीम की पत्ती एवं मेंहदी से अलग–अलग रंग तैयार किए जाते हैं। विभिन्न प्रकार के रंगों को बनाने के लिए वनस्पति हमेशा अपने बगीचे से ही लिया जाता है। दूसरों के बगीचे में उपलब्ध पेड़–पौधों का उपयोग नितान्त वर्जित है। एक अन्य नियम के अनुसार भोजन उपयोगी पौधों से रंग नहीं बनाया जाता है। इस प्रकार मधुबनी चित्रकला एक अति प्राचीन संस्कृति का टुकड़ा है। परन्तु आधुनिक समाज पर पड़ती पश्चिमी प्रभाव के परिणामस्वरूप मधुबनी चित्रकला लुप्तप्राय हो चुकी थी। परन्तु समय रहते पर्यटन उद्योग का ध्यान इस ओर गया और विभिन्न शिल्प मेलों में तथा शिल्प ग्राम में मधुबनी के चित्रकारों को आमंत्रित कर उन्हें कला प्रदर्शन का अवसर दिया गया। देश–विदेश के पर्यटक इसके प्रति आकर्षित हुए और आज मधुबनी चित्रकला की प्रदर्शनी किसी भी अनुकूल समारोह का अभिन्न अंग बन चुका है।

इस प्रकार आज हमारे समक्ष ऐसे अनेक उदाहरण मौजूद हैं, जिनके आधार पर संस्कृति के संरक्षण में पर्यटन उद्योग की भूमिका को रेखांकित किया जा सकता है। सच तो यह है कि संस्कृति आज पर्यटकों को आकर्षित करने का एक प्रमुख बिन्दु बन गया है और यह पर्यटन उद्योग के हित में ही है कि प्राचीन कला, नृत्य, संगीत एंव शिल्प को न सिर्फ सुरक्षित रखा जाए बल्कि उनके संपोषण के द्वारा सम्बन्धित कलाकारों की आर्थिक दिशा में भी उत्तरोत्तर सुधार आए। संस्कृति एवं पर्यटन के इस पूरक सम्बन्ध से दोनों ही क्षेत्रों में पर्याप्त विकास हुआ है।

पर्याहितैषी नवपर्यटन

पर्यटन उद्योग आज आर्थिक जगत में पेट्रोलियम उद्योग के पश्चात मात्र दूसरे स्थान पर है। पर्यटन का महत्व सामाजार्थिक विकास एवं नियोजन के क्षेत्र में भी सर्वविदित है। वर्तमान भूमंडलीकरण एवं आर्थिक उदारता के जमाने में पर्यटन का महत्व और भी बढ़ गया है। सामान्य तौर पर "धुआँ रहित" उद्योग के नाम से जाना जाने वाला पर्यटन उद्योग विश्व बैंक में काफी ऊपर है। इन अन्तराष्ट्रीय वित्तीय संस्थानों ने विकसित देशों को आर्थिक सहायता देने के पूर्व पर्यटन विकास करने की शर्त लगा रखी है। आर्थिक परिपेक्ष्य में अति महत्वपूर्ण एवं संवेदनशील स्थान प्राप्त कर लेने के पश्चात पर्यटन उद्योग की जिम्मेदारियाँ भी बढ़ी हैं तथा इसे अब नए दृष्टिकोण के साथ विकास करने की आवश्यकता है।

शुरू में परम्परागत पर्यटन प्रबन्धक पर्यटन विकास को स्थल तरीके से व्यवस्थित किया करते थे। पर्यटन को गरीबी उन्मूलन तथा धनोपार्जन का साधन मानते हुए इसके अंधाधुंध विकास को ही उत्थान का मूल मंत्र मानते थे। इन परम्परावादियों का ऐसा मानना था कि पर्यटन विकास के कारण एकत्रित धन धीरे–धीरे समाज के सभी वर्गों तक पहुँचेगा और इस प्रकार सबकी भलाई होगी और मनुष्य मात्र सुखी हो जाएगा। इस प्रकार की आर्थिक विचारधारा में पर्यावरण को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया गया। मानव हित पर अत्याधिक बल और पर्यावरण को अनदेखा करने के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार की समस्याएँ शीघ्र ही सामने आने लगी। स्थान विशेष पर मनुष्यों का अधिक जुटना अपने आप में समस्यामूलक साबित होने लगा। प्रदूषण की समस्याएँ विकट होती चली गई। भूमि स्वरूप में अवांछनीय बदलाव आने लगा और स्थान विशेष की पाकृतिक एवं नैसर्गिक छटा धीरे–धीरे लुप्त होने लगी। इस प्रकार परम्परागत उद्योग से सम्बन्धित सारी समस्याएँ पर्यटन विकास के साथ–साथ भी प्रकट होने लगी। इस प्रकार "धारक–क्षमता" की विचारधारा का महत्व पर्यटन उद्योग में भी बढ़ने लगा और पर्यावरण घटकों के प्रति लोग ज्यादा संवेदनशील होने लगे। आधुनिक समय में एक ऐसा विचार उदित हुआ जिसके अनुसार मनुष्य को पर्यावरण के विभिन्न घटकों का संरक्षक माना जाने लगा जबकि पुरानी विचारधारा में मनुष्य प्रकृति का उपभोक्ता समझा जाता था। इस प्रकार अपनी सुविधा एवं उन्नति के लिए विभिन्न उत्पादों एवं सेवाओं का उपयोग करने के साथ–साथ प्राकृतिक संतुलन पर ध्यान देना मनुष्य की जिम्मेदारी सी बन गई। पर्यटन उद्योग के लिए इस बदलती विचारधारा का महत्व और भी अधिक था। स्वच्छ पर्यावरण, प्रदूषण रहित जल एवं वायु तथा प्राकृतिक सौन्दर्य पर्यटन व्यवसाय का मेरूदंड रहा है। इन मूलभूत सुविधाओं के अभाव में पर्यटकों को लुभा पाना प्रायः असम्भव है। अतः पर्यटन प्रबन्धन से जुड़े लोगों

के लिए पर्यावरण संरक्षण जीवन–मरण का प्रश्न बन जाता है। इन महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर पर्यटन प्रबन्धकों ने समय रहते ही ध्यान देना प्रारम्भ कर दिया था तथा इसके परिणाम स्वरूप पर्यटन का नवीन प्रारूप आज अलग–अलग नामों से हमारे समक्ष उपलब्ध है। पारिस्थिति पर्यटन अथवा ईको टूरिज्म, प्रकृति पर्यटन अथवा नेचर टूरिज्म, वैकल्पिक पर्यटन अथवा अल्टरनेटिव टूरिज्म, हरित पर्यटन अथवा ग्रीन टूरिज्म, सस्टेनेबल टूरिज्म इत्यादि नए विशेषण युक्त पर्यटन आज इस व्यवसाय के शब्दावली में जुड़ चुके हैं। ऊपर वर्णित पर्यटन के विभिन्न प्रकारों का मूल दर्शन प्राकृतिक एवं पर्यावरणीय विशेषताओं का संरक्षण ही है। अतः पर्यटन के इन वैकल्पिक प्रकारों को नव पर्यटन के नाम से यहाँ उल्लेखित किया जा रहा है।

पारिस्थितिक पर्यटन अथवा ईको टूरिज्म

ईको टूरिज्म शब्द का उपयोग सर्वप्रथम कौस्टारिका देश के एक पर्यटन प्रबन्धक ने सन् 1983 ई० में किया था। यद्यपि इस शब्द का पहला उपयोग व्यवसायिक दृष्टिकोण से किया गया था परन्तु यह पर्यटन उद्योग को एक नया आयाम दे गया। इस व्यवसाय से जुड़े लोगों ने पूरी जिम्मेवारी एवं ईमानदारी के साथ पर्यटन विकास एवं पर्यावरण को एक सिक्के का दो पहलू मानने लगे तथा यह पूरे उद्योग के लिए एक शुभ संकेत था। सन् 1987 में मैक्सिको से प्रकाशित पर्यटन सम्बन्धी एक पत्रिका में हेक्अर से बैलोस लैस्कूरियन की विस्तार से व्याख्या की। लेखक के अनुसार "ऐसा पर्यटन जो अपेक्षाकृत भीड़ वाले स्थान से दूर हो तथा जिसका उद्देश्य उस स्थान पर उपलब्ध विशिष्ठ पेड़–पौधे, जन्तुओं अथवा वहाँ की संस्कृति की प्रशंसा एवं अध्ययन करने के लिए किया जाता हो उसे ईको टूरिज्म कहा जा सकता है। यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि एक पारिस्थितिक पर्यटक वैज्ञानिक अथवा दार्शनिक हो परन्तु उसके भ्रमण के पीछे वैज्ञानिक एवं दार्शनिक झुकाव होना आवश्यक होता है। मूल बिन्दु यह है कि इस प्रकार के पर्यटन के दौरान व्यक्ति अपने अस्तित्व को प्रकृति में इस प्रकार समाहित कर देता है, जो कि शहरी जीवन में नितान्त कठिन होता है। ऐसा पर्यटक धीरे–धीरे एक ऐसे विचार से प्रभावित होता है, जिसमें वक स्वतः ही प्रकृति एवं पर्यावरण संरक्षण के प्रति संवेदनशील हो जाता है।" इसके पश्चात एलिजाबेथ बू ने विश्व वन्यजीव न्यास के एिल अपना एक रिपोर्ट प्रकाशित किया। लगभग उसी समय क्रेग लिडंबर्ग का एक शोधपत्र विश्व संसाधन संस्थान की पत्रिका में प्रकाशित हुआ। इन दोनो ही आलेखों में "ईको टूरिज्म" की विस्तृत व्याख्या की गई, जिसकी मूल भावना लैस्कूरियन के विचार से काफी मेल खाता था। पारिस्थितिक पर्यटन के प्रारम्भिक विवेचनाओं में पर्यटन स्थल एवं उसके अन्तर्गत होने वाली विभिन्न क्रिया कलापों पर काफी बल दिया गया था। इस मूलरूप से व्याख्यात्मक विचारधारा में

पारिस्थितिकी के सूक्ष्म तन्तुओं पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा सका। इस प्रकार की विचाराधारा पूरी तरह से पर्यावरण के विभिन्न आयामों को छू पाने में असफल सिद्ध हुआ। राष्ट्रीय उद्यानों अथवा वन्य प्राणी अभयारण्यों का ही उदाहरण ले लें। ऐसे स्थान प्रथम दृष्टि में पारिस्थितिक पर्यटन के लिए सर्वथा अनुकूल लगते हैं। परन्तु इन स्थानों में होने वाली घटनाएँ एवं क्रिया कलाप पर्याहितैषी हों ऐसा आवश्यक नहीं है। राष्ट्रीय उद्यान में जाने वाला पर्यटक समूह यदि वहाँ तेज ध्वनि वाला गाना बजाता है, स्वयं शोरगुल करता है अथवा आग जलाकर रात्रि विश्राम (कैम्प फायर) करता है तो यह सर्वथा पारिस्थितिक पर्यटन के प्रतिकूल होगा। अतः शीघ्र ही विद्वानों ने अनुभव किया कि पारिस्थितिक पर्यटन के दायरे में पर्यावरण को और अधिक महत्व देना आवश्यक है। इसके साथ–साथ सामाजार्थिक पहलू को भी पर्याप्त स्थान देकर ही पर्यटन की इस नई विद्या को सम्पूर्ण बनाया जा सकता है। अतः करेन जिफ़र ने ईको टूरिज्म का संशोधित परिभाषा कुछ इस प्रकार से दिया है।

"ईको टूरिज्म पर्यटन का वह स्वरूप है, जिसमें किसी स्थान विशेष के प्राकृतिक इतिहास के साथ–साथ वहाँ की मौलिक संस्कृति पर भी विशेष ध्यान दिया जाता है। पर्यटक विशेष तौर पर ऐसे स्थान पर भ्रमण करता है जिसका पूर्ण विकास नहीं हुआ हो तथा भ्रमण कर मुख्य उद्देश्य उस स्थान की मौलिकता को सराहना तथा उसमें भागीदारी निभाना होता है। ऐसा पर्यटक कभी भी प्राकृतिक संसाधनों का दोहन अथवा दुरूपयोग नहीं करता है बल्कि अपनी बुद्धि, श्रम अथवा पैसे से पर्यावरण के संरक्षण तथा वहाँ के मूल निवासियों की भलाई में प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से योगदान देता है। ऐसा भ्रमण प्रकृति संरक्षण एवं स्थानीय संस्कृति के संरक्षण में सहायक होता है। ईको टूरिज्म के अन्तर्गत स्थानीय पर्यटन प्रबन्धक ऐसी व्यवस्था करते हैं, जिसमें स्थानीय समुदाय के लोगों की अधिक से अधिक भागीदारी होती है। वस्तुतः स्थानीय लोगों के केन्द्र में रखकर तथा उन्हीं की सहायता से पर्यटन प्रबन्धन विपणन एवं कार्यान्वयन किया जाता है।"

ईको टूरिज्म की परिभाषा प्रथम दृष्टि में अति आदर्शवादी एवं पारम्परिक पर्यटन प्रबंधको के विचार से गैर व्यावहारिक भी लग सकता है। परन्तु पर्यावरण की वर्तमान अवस्था तथा पर्यटन उद्योग के भविष्य के लिए इसे स्वीकारना ताकि इसे प्रयोग में लाना अनिवार्य होता जा रहा है। गौरतलब बात यह है कि पारिस्थितिक पर्यटन अपनी शुरूआती अवस्था से निरन्तर उद्विकास कर रहा है तथा उसमें नित्य नए आयाम जुड़ते चले जा रहे हैं। शुरू–शुरू में पर्यटन स्थल पर विशेष बल दिया गया। उदाहरण के स्वरूप पारम्परिक स्थान जैसे ऐतिहासिक अथवा धार्मिक स्थलों के बजाय वन्य प्राणी अभयारण्य तथा राष्ट्रीय उद्यानों का भ्रमण मात्र ही ईको टूरिज्म कहा जाता था।

शीघ्र ही लोगों ने अनुभव किया कि राष्ट्रीय उद्यान में जाकर यदि पर्यटक पर्यावरण विरोधी कार्य करता है तो उससे कालान्तर में पर्यटन स्थल के साथ–साथ पर्यटकों के व्यवहार पर भी विशेष उल्लेख एवं दिशा निर्देश दिया जाने लगा। इसके पश्चात लोगों ने अनुभव किया कि स्थान कितना भी प्राकृतिक क्यों न हो और पर्यटकों का व्यवहार शालीन क्यों न रहे, पर्यटन गतिविधियों का कुछ असर तो प्राकृतिक घटकों पर हो कर ही रहेगा। अतः पर्यटन उद्योग के उज्ज्जवल भविष्य के लिए यह अति आवश्यक है कि प्रबन्धकों एवं स्थानीय लोगों के साथ–साथ पर्यटकों का भी पर्यावरण सरंक्षण में कुछ योगदान हो। इसके लिए यह आवश्यक हो जाता है कि पर्यटकों के दिल एवं दिमाग में पर्यटन स्थल के पर्यावरणीय विशेषताओं के प्रति श्रद्धा एवं जागरूकता हो। अतः पर्यटकों को पर्यावरण के प्रति अति संवेदनशील होना भी पारिस्थितिक पर्यटन का एक अंग होना चाहिए। अतः ईको टूरिज्म में पर्यटकों का पर्यावरण प्रेमी होना भी एक नया आयाम जुड़ गया। इस प्रकार धीरे–धीरे पर्यावरणीय घटकों की महत्ता पारिस्थितिक पर्यटन में बढ़ती चली गई इसके पश्चात लोगों का ध्यान स्थानीय लोगों की भागीदार के प्रति गया। ऐसा अनुभव किया गया कि स्थानीय लोगों को सम्मिलित किए बिना पर्यटन स्थल का प्राकृतिक सौन्दर्य तथा पर्यावरणीय संतुलन अक्षुण्ण नहीं रखा जा सकता है और स्थानीय लोगों के बीच पर्यावरण के प्रति जागरूकता तब तक विकसित नहीं हो सकता जब तक उनकी भागीदारी पर्यटन उद्योग में सुनिश्चित नहीं किया जाता है। अतः स्थानीय भागीदारी का नया बिन्दु ईको टूरिज्म में जोड़ा गया तथा उसका सुखद परिणाम शीघ्र ही सामने आने लगा। इसके पश्चात भुमंडलीकरण तथा खुली अर्थव्यवस्था की नीति का सूत्र–पात एवं विकास होने लगा। इस नई आर्थिक सोच ने लोगों को एक दूसरे के और करीब ला दिया तथा उपभोक्तावादी संस्कृति का प्रादुर्भाव हुआ। ऐसी अवस्था में समाज का हर तबका सुविधाभोगी होने लगा तथा उसे हर नई वस्तु को प्राप्त करने की बलवती इच्छा होने लगी। अतः आर्थिक मामले में क्षेत्रीय असंतुलन स्पष्ट रूप से प्रकट होने लगा तथा उसका दुष्परिणाम भी सामने आने लगा। समाजशास्त्रियों ने अनुभव किया कि इस आर्थिक असंतुलन को दूर किए बिना पारिस्थितिक पर्यटन की कल्पना को साकार नहीं किया जा सकता है। अतः ईको टूरिज्म के नवीनतम विवरण में सामाजिक–आर्थिक संतुलन को भी बरकरार का महत्व देते हुए इस नए आयाम को जोड़ा गया है।

अतः पारिस्थितिक पर्यटन के प्रबन्धन में हमें क्रमवार निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना होगा :

1. सर्वप्रथम एक ऐसे स्थान का चुनाव किया जाना चाहिए, जो परम्परागत पर्यटन स्थल से दूर हो तथा अपेक्षाकृत अछूता रहा हो। यह स्थान प्राकृतिक सौंदर्य, हरियाली, वन्य प्राणी एवं मौलिक संस्कृति से परिपूर्ण होना चाहिए। यहाँ जल एवं वायु अप्रदूषित होना चाहिए।

2. पर्यटन विकास एवं प्रबन्धन इस प्रकार से किया जाना चाहिए जिससे यहाँ की मौलिक भूमिस्वरूप में कोई खास परिवर्तन न आए। मूलभूत सुविधा मुहैया कराने के नाम पर मौलिकता को नष्ट कर देना ईको टूरिज्म के प्रतिकूल हो जाएगा।

3. पर्यटकों का क्रिया कलाप पर्याहितैषी होना आवश्यक है। पर्यटन के दौरान प्राकृतिक संसाधनों का दोहन सर्वथा अवांछनीय है। पर्यटकों को स्थान विशेष के प्राकृतिक एवं पर्यावरणीय विशेषताओं का कद्रदान होना चाहिए तथा संरक्षण में उनकी भूमिका निश्चित होना आवश्यक है।

4. ईको टूरिज्म के प्रबन्धन एवं विकास में स्थानीय भागीदारी अति महत्वपूर्ण होता है। भागीदारी मात्र जिम्मेवारी में ही नहीं वरन् आय में भी होना चाहिए जिससे उस स्थान का उचित सामाजिक–आर्थिक विकास हो सके।

ईको टूरिज्म के सिद्धान्तों का बड़ी सफलता से पालन वेनेजुएला के "हाटो पिनारो" नामक अभयारण्य में लगभग 25 वर्षों से किया जा रहा है। उल्लेखनीय बात यह है कि पर्यटन की इस नई विद्या का व्यावहारिक उपयोग इसके प्रतिपादन एवं प्रचलित होने के पूर्व से ही किया जा रहा है। लगभग 80,000 हेक्टेएर क्षेत्रफल में विस्तृत इस भू–भाग पर पर्यटन एवं पर्यावरण का अनूठा सामन्जस्य देखा जा सकता है। हाटो पिनारो में पठार, अनूप स्थल (वेटलैंड), पर्वत, झरने, वन इत्यादि विभिन्न प्रकार के भू–भाग मिलते हैं। चार नदियाँ एवं अनेकों झरने यहाँ का प्राकृतिक जलस्त्रोत है। लगभग 300 प्रजातियों के पक्षी एवं कई स्तनधारी एवं सरीसृप भी यहाँ पाए जाते हैं। प्रकृति प्रेमियों के लिए यह स्थान वह सब कुछ प्रदान करता है जिसकी उन्हे अभिलाषा होती है। परन्तु यहाँ सब कुछ पर्यावरण एवं प्राकृतिक संरक्षण को केन्द्र में रख कर ही किया जाता है। वस्तुत पर्यावरण के प्रति जागरूकता स्वयं पर्यटन उद्योग के वरदान सिद्व होता है क्योंकि पर्यटक साफ–सुथरे एवं हरे–भरे स्थान के प्रति स्वतः ही अकर्षित होते हैं। पारिस्थितिक पर्यटन के विकास से स्थानीय समुदायों को आजीविका प्राप्त होती है तथा पर्यटन उद्योग के भागीदारी बन कर उन्हे संतोष भी मिलता है। अर्जेटिना देश के विश्व प्रसिद्व काऊ बोआय अपनी पारम्परिक पेशे के साथ–साथ प्रकृति पर्यटन के लिए आए पर्यटकों को मार्ग दर्शन करके भी पैसे कमाते हैं। इसी प्रकार दक्षिण अफ्रिका के जुलू समुदाय के लोग छोटे–छोटे विश्रामालय चला कर अपनी अमदनी करते है। इन मूल निवासियों के द्वारा पर्यटकों के लिए नृत्य एवं विशिष्ट खेलों का आयोजन भी किया जाता है। इन संस्कृतिक आयोजनों में भाग लेकर पर्यटकों को रोमांच भी दुगना होता है साथ ही उस स्थान के पारम्परिक संस्कृति का पुनर्जागरण भी होता है। विलुप्त होती एवं अपेक्षित पड़ी संस्कृतिक

धरोहरों के प्रति चेतना से भी पारिस्थितिक पर्यटन का प्रबन्धन काफी अनुकूल होता है क्योंकि ऐसे पर्यटक अक्सर मंहगी सुविधाओं की अपेक्षा नही रखते हैं।

वैकल्पिक पर्यटन एवं पर्यावरण

सैद्धान्तिक तौर से वैकल्पिक पर्यटन में जहॉ एक और पर्यटन को पर्याप्त मनोरंजन एवं नवीन अनुभवों को उपलब्ध करवाया जाता है वही स्थानीय संस्कृति एवं रीति–रिवाजो का भी भरपूर ख्याल रखा जाता है। इस प्रकार वैकल्पिक पर्यटन के प्रणेता प्रबन्धकों के लिए स्थानीय संस्कृति एवं स्थानीय लोगों का काफी अधिक समृद्धि में तो अवश्य वृद्धि हुई परन्तु इसका दुष्परिणाम भी सामने आने लगा। पर्यटन के विभिन्न घर को व्यवस्थित करने के लिए बाहरी पूँजीपति एवं विषेषज्ञ आने लगे। स्थानीय लोगों के पास न तो पर्याप्त पूँजी था न ही उपयुक्त विषेषज्ञतां ही उन्हें प्राप्त थी। अतः खुली प्रतियोगिता में वे मार खाने लगे। बडे उद्योगपतियों के द्वारा उनके भूमि उधिग्रहण से स्थिति और भी बद्तर होती गई और अन्ततः मूल निवासियों को पलायन करना पडा। इस प्रकार जनसंख्या स्वरूप में आया परिवर्तन दूरगामी दृष्टिकोण से उचित नहीं था। परम्परागत पर्यटन का दूसरा प्रतिकूल प्रभाव पर्यटन स्थल के संस्कृति पर पड़ने लगा। बाहरी पर्यटक अपने साथ उपभोक्तावाद को लाने लगे। स्थानीय निवासी पर्यटकों के वेश भूषा एवं रहन सहन को बड़े ही कौतूहल से देखते एवं धीरे–धीरे उनका अन्धानुसरण करना प्रारम्भ कर दिए। इसका स्पष्ट एवं प्रतिकूल प्रभाव स्थानीय संस्कृति पर पड़ने लगा। जोधपुर एवं जयपुर जैसे अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटक स्थल के नवयुवक वहाँ की परम्परागत पगड़ी पहनने में झिझक महसूस करने लगे। चोली–घाघरा ने पथ्य में जाने लगा और टी–शर्ट का घुस पैठ शुरू होने लगा। पारम्परिक भोजन दाल–बाटी एवं चूरमा के स्थान पर चाईनीज व्यंजन अधिक पसंद किया जाने लगा। घुमर एवं कालबेलिया नृत्य का स्थान डिस्को एवं ब्रेकडांस लेना शुरू कर दिया। इस प्रकार पर्यटनजन सांस्कृतिक क्षरण के प्रति लोगों ने काफी चिन्ता व्यक्त करना शुरू कर दिया। स्थानीय लोगों का विस्थापन एवं सांस्कृतिक परिवर्तन दोनो ही पर्यटन उद्योग को कलंकित कर रहे थे। अतः पर्यटन विशेषज्ञों ने वैकल्पिक पर्यटन की परिकल्पना करना प्रारम्भ किया। वैकल्पिक पर्यटन में पारम्परिक पर्यटन के सिद्धान्तों को परिवर्तित करते हुए स्थानीय संस्कृति एवं मूल्यों पर काफी बल दिया गया। पर्यटन नए पर्यटन स्थल पर आकर कुछ दिनों के लिए अपनी मूल संस्कृति एवं रीति रिवाजों को भुलकर अपने द्वारा चुने गए स्थान की संस्कृति को अपना लेते है। पर्यटक परम्परागत होटलों एवं विश्रामालय के बजाय स्थानीय लोगों के साथ नए परिवेश कें रहते है। पर्यटन के दौरान स्थानीय भोजन का रसास्वादन करते हैं एवं भ्रमण स्थल के दिनचर्या में आत्मसात हो जाते है। इस प्रकार वैकल्पिक पर्यटन के विकास से किसी भी स्थान के सामाजिक एवं सांस्कृतिक मौलिकता का न सिर्फ संरक्षण होता है बल्कि उन्हें

फलने फूलने का भी उचित अवसर प्राप्त होता है। वैकल्पिक पर्यटन के विवरण में राजस्थान में देखे जा सकने वाले सांस्कृतिक परिवर्तन का जिक्र किया गया है। उसी राजस्थान में पर्यटन के इस नए आयाम का सुखद परिणाम भी देखा जा सकता है। जयपुर के नजदीक ही एक होटल ''चोखी धागी'' आज पर्यटकों के जुबान पर आम नाम बन चुका है। शहर से दूर ग्रामीण परिवेश में बने इस होटल का साज–सज्जा पूर्ण रूप से ग्रामीण और मौलिक राजस्थानी शैली का है। लोग पाँच तारा होटल की सुविधा एवं चमक दमक को छोड. इस होटल में जमीन पर बिछी दरियों पर बैठ खाना पसंद करते है। परोसे जाने वाला व्यंजन भी ठेठ राजस्थानी होता है तथा खाना बनने तथा परोसने का तरीका भी ग्रामीण शैली का होता है। भोजन के साथ–साथ राजस्थानी नृत्य–संगीत का जीवन प्रदान करता है। वैकल्पिक पर्यटन का यह अनूठा प्रयोग काफी प्रचलित हुआ है। देश के अन्य भागों में भी इस अनूठे प्रयोग की झलक देखी जा सकती है।

हरियाणा एवं पंजाब में हाईवे रेस्त्रॉ निरन्तर कामयाबी की और अग्रसर हो। यहॉ टेबुल कुर्सी के स्थान पर परम्परागत खच्चि बिछी होती है। जिस पर बैठ कर लोग मक्के की रोटी सरसों का साग एवं लस्सी का मजा लेते हैं। महानगरों से सप्तांहात में इन परम्परागत ढाबों में आने का प्रचलन काफी बढ़ रहा है। यह वैकल्पिक पर्यटन के विकास का ही संकेत है कि ब्रज की होली शांति निकेतन के फागुन महोत्सव एवं दक्षिण भारत के ओणम एवं पोंगल में भाग लेना अब देशी विदेशी पर्यटकों की सूचि में काफी महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

उतरदायी पर्यटन

पर्यटन के नए स्वरूपों में उत्तरदायी पर्यटन का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इस प्रकार के पर्यटन में भी पर्यटक अपने द्वारा चुने गए भ्रमण स्थाल का विषेष ध्यान रखता है। स्थानीय लोगों की भागीदारी पर्यटन प्रबन्धन नीति निर्धारण एवं व्यवसाय के हर एक स्तर पर होता है। पर्यटन व्यवसाय का दर सीमा तथ आयाम का निर्धारण स्थानीय लोग ही करते है। पर्यटकों को पर्यटन स्थल पर पहुॅचने के पूर्व उस स्थान की जानकारी दी जाती हैं। पर्यटकों की दी जाने वाली जानकारी में स्थान विशेष का भूगोल इतिहास सामाजिक व्यवस्था एवं संस्कृति का प्रमुख विवरण होता है। अक्सर पर्यटन के पूर्व कार्यशाला का आयोजन करके ऐसी जानकारियाँ दी जाती है। अमेरिका के मेन्डेनहाल ग्लोशियर जाने के पूर्व सैलानियों को इस प्रकार की कार्यशाला में हिस्सा लेना अनिवार्य होता है। भारत में भी गंगोत्री एवं यमुनोत्री का भ्रमण करने के पूर्व तत्सम्बन्धित जानकारियॉ देने का प्रावधान शुरू हुआ है। अधिकांश शैक्षणिक पर्यटन परियोजना सम्बन्धी पर्यटन एवं वैज्ञानिक खोज सम्बन्धी पर्यटन उतरदायी पर्यटन के विशिष्ट दायरे में आते हैं।

सॉफ्ट टूरिज्म (कोमल पर्यटन)

पर्यटन सम्बन्धी नई शब्दावलियों में सोफ्ट टूरिज्म अथवा कोमल पर्यटन का भी विशेष उल्लेख होता है। पर्यटन की इस नई विध के प्रतिपादकों में पर्यटन एवं स्थानीय समुदाय के बीच बेहतर तालमेल एवं एक दूसरे के हितों को रक्षा करने पर विशेष बल दिया जाता है। पर्यटकों से अपेक्षा की जाती है कि वे पर्यटन स्थल के प्रति संवेदनशील हो तथा उसे मात्र उपभोक्ता वस्तु न समझे। पर्यटन स्थल के मूल निवासियों के प्रति उनका दृष्टिकोण दोस्ताना होना चाहिए। पर्यटन के दौरान स्थानीय लोगों के द्वारा व्यवस्थित विश्रामालयों में ठहर कर स्थानीय हस्तशिल्प की वस्तुएँ खरीदकर एवं स्थानीय व्यंजनो को खा कर लोगों की आर्थिक उन्नति में मदद करनी चाहिए। स्थानीय लोगों का भी दायित्व बनता है। कि पर्यटन के लिए उपयोगी वस्तुएँ एवं सेवाओं का उचित मूल्य व्यवस्था कर के व्यवसाय को उन्नत करने में योगदान करें। इस प्रकार आपसी तालमेल से एक अति कोमल पर्यटन व्यवसाय की स्थापना की जा सकती है।

नव पर्यटन को विकसित करने के कुछ मूल मन्त्र

नव पर्यटन के विभिन्न प्रकारों की विस्तृत विवेचना के पश्चात पर्यटन विकास के निम्न बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक होता है :

1) पर्यटन विकास की आर्थिक विवेचना करने के पूर्व पर्यावरण के सभी सूक्ष्म स्थल घटकों पर विचार करना आवश्यक होता है। कही–कही पर यह विचार आसान होता है जैसे होटल निर्माण के लिए यदि कृषि योग्य भूमि का अधिग्रहण करना हो तो उस भूमि पर खेती से होने वाले प्रति वर्ष आय का लेखा जोखा रखना आवश्यक होगा। परन्तु कही–कही पर्यावरणीय घटको का सीधे–सीधे आर्थिक मापदंड पर नही नापा जा सकता है। उदाहरण के स्वरूप होटल निर्माण के लिए अगर अनूप स्थल का उपयोग किया जाता है तो वहाँ आने वाले आव्रजन्य पक्षियों की संख्या शुन्य हो जाएगी। दुर देश से आने वले पक्षियों का प्रत्यक्ष आर्थिक आकलन करना तो सम्भव नही होगा परन्तु इसका पर्यावरणीय असर काफी स्पष्ट होगा।

2) नव पर्यटन को विकसित करने में पर्यटकों के पसंद कोक सूक्ष्मता से परखना होता है। पर्यटकों के पसंद की जानकारी ले पाना अपने आप में एक जटिल क्रिया है। अक्सर पर्यटकों के व्यवहार को देख कर अथवा उनकी अभिव्यक्ति को ध्यान में रख कर उनकी ईच्छा का अनुमान लगाया जाता है। परन्तु यह हमेशा सही हो या आवश्यक नहीं है। अक्सर पर्यटकों की अभिव्यक्ति एवं उनकी आंतरिक ईच्छा में काफी फर्क होता है।

3) पर्यटन परियोजना बनाते समय "धारक क्षमता (कैरिंग कैपेसिटी)" एवं "आत्मसाती क्षमता (एसीमीलेटरी कैपेसीटी)" के जैसी तकनीकी शब्दों का दुरूपयोग बडे धडल्ले से किया जाता है। सच्चाई तो यह है कि किसी भी पर्यटन स्थल की धारक क्षमता का न तो हमें अन्दाज होता है न ही उसे मापने का कोइ उचित प्रयास ही किया जाता है। अतः ज्यादा व्यावहारिक यह होगा कि स्थान विशेष को ''कोर क्षेत्र'' में चिन्हित कर वहाँ पारिस्थितिक पर्यटन के विकास की योजना तैयार की जाए।

4) कुछ विद्वानों का मानना है कि पारिस्थितिक पर्यटन के लिए व्यावहारिक योजना बनाते समय'' पारिस्थतिक विपन्न शैली '' को उपयोग में लाया जाए। अर्थशास्त्रियों का ऐसा अभिमत है कि किसी भी स्थान का पारिस्थितिक तन्त्र अपना विशिष्ट महत्व एवं उत्पादन क्षमता रखता है अतः उस पारिस्थितिक तन्त्र के सुरक्षित उपयोग के पूर्व उसका मूल्य निर्धारण कर आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार पारिस्थितिकी की प्रत्येक इकाई का मूल्य निश्चित कर उसे पर्यटन व्यावसाईयों को बेच देना चाहिए। कितनी इकाईयों की बिक्री की जाए यह पारिस्थितिकी की सुरक्षा को ध्यान में रख कर ही करना चाहिए। इस प्रकार स्थानों का विपणन वहाँ के पर्यावरण को देखते हुए करने से कई प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष लाभ होते हैं। सर्वप्रथम पर्यटन प्रबन्धक स्वयं ही उस स्थान के प्राकृतिक संरक्षण के लिए तत्पर रहेगा क्योंकि उसने उसका दाम आद किया होता है। अगर पर्यटन स्थल का पारिस्थितिकी सुरक्षित नही होगा तो वहाँ पर्यटक जाना पसन्द नही करेंगे और लगाई गई धन राशि बेकर हो जाएगा। दूसरी ओर इकाईयों के विपणन से प्राप्त धन राशि से एक कोश का निर्माण किया जा सकता है जिसका उपयोग पर्यावरण संरक्षण एवं सामाजिक–आर्थिक विकास के लिए किया जा सके।

5) ईको टूरिज्म एक ऐसी क्रिया है जिसमें विभिन्न संगठनों का योगदान आवश्यक होता है। विभिन्न सरकारी विभागों पर्यावरण विदों गैर सरकारी संगठनो एवं पर्यावरण में सामन्जस्य स्थापित हो सकता है। अभि तक ऐसा देखा गया है कि विभिन्न स्तरो पर तो ताल मेल की बात दूर सरकार के विभिन्न विभागों के बीच ही पर्याप्त समन्वय नही हो पाता है। पर्यावरण एवं वन विभाग जिस स्थान पर किसी प्रकार की कार्यवाई पर रोक लगाता है वही सरकार का ही दूसरा विभाग उसे शुरू करने का आदेश जारी कर देते है। ऐसा विरोधभास पर्यावरण मन्त्रालय तथा उद्योग मन्त्रालय के बीच अक्सर ही देखा जा सकता है। ऐसे परस्पर विरोध आदेशों के पारित होने से एक असमंजस की स्थिति बनती है, जिसका भरपुर लाभ कतिपय

तत्वों के द्वारा उठाया जाता है। अतः सर्वप्रथम विभिन्न सरकारी विभागों में तालमेल कायम करना होगा। इसके पश्चात समाज के सभी स्तर पर आपसी समझ बूझ को बढावा देते हुए पारिस्थितिक पर्यटन को विकसित किया जा सकता है।

6) पर्यावरण संरक्षण तथा पारिस्थितिक पर्यटन के उचित विकास के लिए वर्तमान कानून पर्याप्त नही है। इसके लिए और कड़े कानून की आवश्यकता है। कानूनी प्रावधान ऐसे हों, जिन्हें आसानी से तोड़ा नही जा सके।

7) ईको टूरिज्म को प्रभाव से लागू करने की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण कदम है सरकारी नियमों को ईमानदारी एवं तत्परता से लागू करवाना। ऐसा अक्सर देखा गया है कि नियम तो बन जाते हैं परन्तु उनका पालन नही हो पाता है। नियमों को लागू करवाने के लिए जिम्मेदार व्यक्ति एवं विभाग अपनी लापरवाही अथवा कभी–कभी अप्रभावी कार्य शैली के कारण सारी व्यवस्था को ही बिगाड़ देते हैं। नियमों को कडाई से लागू करवाने में सबसे अधिक आवश्यकता राजनैतिक ईच्छा शक्ति की होती है। अक्सर ही कुछ खरित लाभ अथवा दबाव के कारण स्वयं कानून बनाने वाले राजनेता ही इसके क्रियान्वयन के मार्ग में बाधक बन जाते है। इसका सबसे अच्छा उदाहरण समुद्र तट की सुरक्षा के लिए उसके किनारे बनाई गई दूरी की सीमा निर्धारण है। तट से कितनी दूरी तक कोई निर्माण नही होनी चाहिए इस बात का निर्धारण विभिन्न लोगों के शासन काल में अपनी राजनैतिक हानि –लाभ को ध्यान में रख कर बदली गई। ऐसी अवस्था स्वस्थ्य पर्यटन के विकास में बाधक सिद्ध हुई है।

8) पर्याहितैषी पर्यटन को भली भांति लागू करने की दिशा में स्वयं पर्यटन व्यवसाय से जुड़े लोगों की भूमिका भी काफी महत्वपूर्ण होती है। पर्यटन उद्योग को पर्यावरण के प्रति अति संवेदनशील होना होगा क्योंकि इस उद्योग का भविष्य स्वच्छ पर्यावरण एवं रमणीक प्राकृतिक स्थलों पर ही आधारित होता है। पर्यटन प्रबन्धक पर्यावरण संरक्षण एवं संतुलन के विषय में कोई कदम उठाते समय ऐसा अनुभव करते हैं मानो यह जिम्मेवारी उनके मूल कार्य के अतिरिक्त है। वस्तुस्थिति यह है कि पर्यावरण के प्रति जिम्मेवारी कोई अतिरिक्त विषय नही बल्कि उनके स्वयं के व्यवसाय का मूल मन्त्र है। इस दृष्टिकोण से पर्यटन प्रबन्धकों को पर्यावरण के विभिन्न घटकों एवं नियमों का पर्याप्त ज्ञान होना आवश्यक होता है। इतना ही नही प्रबन्धकों को स्थान विशेष के सांस्कृतिक एवं भौगोलिक विशिष्टता की भी पूर्ण जानकारी होनी चाहिए। पर्यटन विकास के लिए मूलभूत सुविधाओं की व्यवस्था करते समय यह हमेशा ध्यान में रखना चाहिए कि चुने गए स्थान के ''भूमि स्वरूप'' में कोई अवांछनीय बदलाव न आने पाए।

9) पारिस्थितिक पर्यटन की सर्म्पूण जिम्मेदारी सरकार अथवा पर्यटन उद्योग पर डाल देना सर्वथा अनुचित होगा। इस दिशा में स्थानीय समुदाय का उचित सहयोग प्राप्त हुए बिना सफलता हमेशा संदिग्ध ही रहेगी। ऐसा अक्सर देखा गया है कि झटपट पैसा कमाने के लालच में स्थानीय लोग भी अपनी ही संस्कृति एवं पर्यावरण को नष्ट करने लगते है। किसी भी दर्शनीय स्थान पर अवैध निर्माण का होना तथा गंदगी का अम्बार पाया जाना एक आम बात है तथा इसके लिए स्थानीय लोग ही जिम्मेवार है। मैक ग्रेगर का निम्नलिखित विचार पूरी तस्वीर के स्पष्ट कर देता है। '' पर्यावरण के प्रति जिम्मेवारी में समाज के सभी तबके जैसे– पर्यटक प्रबन्धक नीति निर्धारक पूँजीपति शेयरधारक सरकारी विभाग एवं आम नागरिकों का अपना–अपना हिस्सा होता है। अतः सभी घटकों को अपना उत्तरदायित्व निभाते हुए यह सुनिश्चित करना होगा कि भविष्य में आने वाली पीढ़ी भी पर्यटन का उतना ही मजा ले सके, जितना वर्तमान पीढ़ी ले पा रही है। पर्यटन के नए स्वरूप में पर्यावरण का काफी महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है परन्तु इस प्रकार के पर्यटन के विकास के प्रति कुछ विद्वानों का मत सतर्कता पूर्ण है।

हेक्टर सिबैलोस लैस्कूरियन (1998) ने संदेह व्यक्त करते हुए कहा है कि "यदि ईको टूरिज्म का भी विकास निर्बाध रूप से तथा किसी सीमा के पार होता रहा तो इसका भी दुष्परिणाम आना स्वाभाविक है। अतः इस प्रकार के पर्यटन का बढ़िया परिणाम तब तक आएगा जब तक यह धीमी गति से प्रसारित हो तथा इसका सीमा निर्धारण किया गया हो। इस दिश में स्थानीय लोगों के सुझाव का पालन होना चाहिए न कि उन पर विशेषज्ञों के राय को थोपना चाहिए।

व्हीलर की राय में – इस बात की गारण्टी नहीं ली जा सकती है कि सामान्य पर्यटन से होने वाली क्षति ईको टूरिज्म से नहीं होगी। सब कुछ ईको टूरिज्म के सीमा निर्धारण पर निर्भर करता है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है। कि एक ओर पर्यटन उद्योग से लोग आर्थिक खुशहाली की उम्मीद लगाए बैठै हैं वहीं इस व्यवसाय पर पर्यावरण संरक्षण एवं संतुलन बनाए रखने की नैतिक एवं व्यवसायिक जिम्मेवारी भी है। विशेषतः विकासशील देशों में पर्यटन उद्योग को इस विरोधाभाषी जिम्मेवारियों को पूरा करना और अधिक जरूरी हो जाता है। पर्याहितैषी पर्यटन की दिशा में सुझाए गए नवीन कदमों से ऐसा सुखद सम्मिश्रण प्राप्त करना सम्भव है।

इस पुस्तक में व्यक्त विचार एवं आंकड़े लेखक के अपने हैं। इनसे केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड का सहमत होना आवश्यक नहीं है।

केन्द्रीय प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड, दिल्ली

पर्यावरण एवं वन मंत्रालय

परिवेश भवन, ईस्ट अर्जुन नगर, दिल्ली–110032

Printed at Chandu Press D-97, Shakarpur, Delhi-92 Ph: 22526936